हिन्दी चेतना
हिन्दी प्रचारिणी सभा, कैनेडा की त्रैमासिक पत्रिका
Hindi Chetna • Quarterly Magazine of Hindi Pracharini Sabha, Canada
वर्ष १२, अंक ४६, अप्रैल २०१० • Year 12, Issue 46, April 2010

जितना आप सोच सकते हैं उससे कम में अपने अपने देश के साथ जुड़ें

Bell TV के साथ , केबल से 55% से भी अधिक कम कीमत पर[1], अपने देश से भी अधिक क्रिकेट देखने को अपना लक्ष्य बना सकते हैं। इस मौसम, खेल में शामिल हो जाओ।

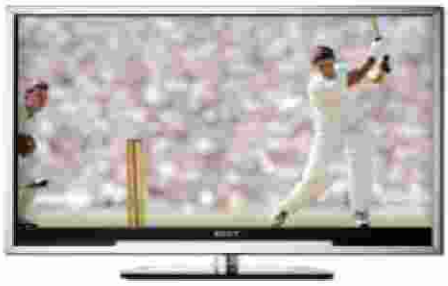

दक्षिण एशियाई कोम्बो

SONY Entertainment Television

$10/MO.[2] 12 महीने के लिए

Bell TV बल्ले बाजी करने जा रहा है बड़ी विशेषताओं के साथ जैसे
. 500 से अधिक डिजिटल चैनल चुनाव के लिए अधिकाँश HD में मिलाकर
. उत्कृष्ट पिक्चर क्वालिटी नियमित केबल से 10 गुणा बेहतर
. शामिल करें चिन्ता मुक्त पूरा होम सेटप[3]

ICT North: 1 888 735-9777

Bell TV देखना अब हुआ बेहतर

Offer ends June. 30, 2010. Available where access and line of sight permit. Digital service fee ($3/mo. per account) extra. Upon early termination, price ajustment charges apply. Subject to change without notice. Taxes extra Other conditions apply. (1) As of April. 1, 2010. Compared to Rogers' South Asian combo billed $24.95/mo. (2) With new account on a min. 2-yr. contract and subscription to South Asian combo at time of activation. Regular rates apply at the end of the promotional period. (3) Details at bell.ca/installationincluded.

इस अंक में

सम्पादकीय		03
पाती		04
प्रज्ञा परिशोधन		07
संस्मरण		10
हिन्दी ब्लॉग में इन दिनों		12
कहानी		
उसके हिस्से का पुरुष	● *पुष्पा सक्सेना*	17
खो जाते हैं घर	● *सूरज प्रकाश*	23
तमाचे	● *प्रतिभा सक्सेना*	31
खुल जा सिमसिम	● *सुषम बेदी*	35
व्यंग्य		
अथ अति उत्तर	● *प्रेम जनमेजय*	40
अगले जनम मोहे ...	● *समीर लाल 'समीर'*	42
प्रभु आप अपना नाम...	● *पाराशर गौड़*	44
कविताएं		
नीलकंठ	● *रविकांत पाण्डेय*	01
संस्कारों की गठरी	● *रचना श्रीवास्तव*	01
हर कोण से	● *सरस्वती माथुर*	50
होली	● *राजीव रंजन*	50
झुर्रियों में छुपा सच	● *डॉ. योगेन्द्र शर्मा*	50
नदिया	● *नरेन्द्र टडंन*	53
अभिव्यक्ति और खेल	● *गजेश धारीवाल*	53
शून्य	● *बी.एस. श्रीवास्तव*	53
लघु कथाएं	● *विजय*	54
पुस्तक समीक्षा	● *देवी नागरानी*	56
गजल		
● *चाँद शुक्ला 'हदियाबादी'*		67
दोहे		
● *सुरेशचन्द्र शुक्ल 'शरद आलोक'*		48
● *आचार्य संजीव 'सलिल'*		
● *शशि पाधा*		
● *डॉ. अफ़रोज़ ताज*		50
साहित्य समाचार		
सोहलवां कथा यू.के....	● सूरज प्रकाश	64
कनाडियन फेडरेशन...	● गोपाल बघेल	67
शाश्वती ने किया...	● ब्रज मोहिनी	68
चित्रकाव्य कार्यशाला		61
संगम		69
विलोम चित्रकाव्य शाला		71
विधि की विडम्बना...	● *उषा देव*	72

12

खो जाते हैं घर

27

खुल जा सिमसिम

44

प्रभु... आप अपना नाम बदल दो!

''हिन्दी चेतना'' सभी लेखकों का स्वागत करती है कि आप अपनी रचनायें प्रकाशन हेतु हमें भेजें। सम्पादकीय मण्डल की इच्छा है कि ''हिन्दी चेतना'' साहित्य की एक पूर्ण रूप से संतुलित पत्रिका हो, अर्थात साहित्य के सभी पक्षों का संतुलन। एक साहित्यिक पत्रिका में आलेख, कविता और कहानियों का उचित संतुलन होना आवश्यक है, ताकि हर वर्ग के पाठक पढ़ने का आनन्द प्राप्त कर सकें। इसीलिए हम सभी लेखकों को आमंत्रित करते हैं कि हमें अपनी मौलिक रचनाएँ ही भेजें। अगले अंक के लिए अपनी रचनाएँ शीघ्रातिशीघ्र भेज दें। अगर संभव हो तो अपना चित्र भी साथ अवश्य भेजें।

रचनाएँ भेजते हुये निम्नलिखित नियमों का ध्यान रखें :

1. हिन्दी चेतना अप्रैल, जुलाई, अक्टूबर तथा जनवरी में प्रकाशित होगी।
2. प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों का पूर्ण उत्तरदायित्व लेखक पर होगा।
3. पत्रिका में राजनैतिक तथा विवादास्पद विषयों पर लिखित रचनाएँ प्रकाशित नहीं की जायेंगी।
4. रचना के स्वीकार या अस्वीकार करने का पूर्ण अधिकार संपादक मंडल का होगा।
5. प्रकाशित रचनाओं पर कोई पारिश्रमिक नहीं दिया जायेगा।
6. पत्रिका में प्रकाशित सामग्री लेखकों के निजी विचार हैं। संपादक तथा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

•
संरक्षक एवं प्रमुख सम्पादक
श्री श्याम त्रिपाठी, कैनेडा
•
सम्पादक
डॉ. सुधा ओम ढींगरा, अमेरिका
•
सहयोगी सम्पादक
डॉ. निर्मला आदेश, कैनेडा
अभिनव शुक्ल, अमेरिका
आत्माराम शर्मा, भारत
अमित कुमार सिंह, भारत
•
परामर्श मंडल
पद्मश्री विजय चोपड़ा, भारत
मुख्य सम्पादक, पंजाब केसरी पत्र समूह
पूर्णिमा वर्मन, शारजाह
सम्पादक, अभिव्यक्ति, अनुभूति
तेजेन्द्र शर्मा, लंदन
महासचिव, कथा यू.के.
डॉ. इला प्रसाद, अमेरिका
सरोज सोनी, कैनेडा
राज महेश्वरी, कैनेडा
श्री नाथ द्विवेदी, कैनेडा
डॉ. कमल किशोर गोयनका, भारत
चाँद शुक्ला 'हदियाबादी', डेनमार्क
डायरेक्टर, रेडियो सबरंग,
अध्यक्ष, वैश्विक समुदाय रेडियो प्रसारण माध्यम
•
विदेश प्रतिनिधि
अनिल शर्मा, थाईलैंड
यास्मिन त्रिपाठी, फ्रांस
राजेश डागा, ओमान
उदित तिवारी, भारत
डॉ. अंजना संधीर, भारत
विनोद चन्द्र पाण्डेय, भारत
•
सहयोगी
सुषमा शर्मा, आलोक गुप्ता, भारत
डैनी कावल, कैनेडा

मुख पृष्ठ कलाकार : अरविन्द नराले

अपनी भाषा अपनी पुस्तक प्यारे-प्यारे अपने लोग
दुनियाभर में जगमग करते बन उजियारे अपने लोग
कोई हँसता कोई गाता किसी की भौंहें तनी हुयी
भावों की पावन नदिया के बहते धारे अपने लोग

अभिनव शुक्ला, अमेरिका

माननीय पाठको!
जैसा कि आपको विदित है, हर वर्ष ''हिन्दी चेतना'' किसी न किसी महान साहित्यकार पर विशेषांक निकालती है। इस वर्ष का विशेषांक श्रद्धेय मदन मोहन मालवीय जी पर केन्द्रित है। आपकी रचनाओं का स्वागत है। रचनाएँ शीघ्र भेजने का अनुरोध है।

श्याम त्रिपाठी
(प्रमुख संपादक)

''अधेड़ उम्र में थामी कलम'' के अन्तर्गत इस अंक में उषा देव का यात्रा संस्मरण प्रकाशित किया जा रहा है। आप के मन में भी तमाम बातें गूंज रही होंगी, तो कह डालिये, उम्र की ओर ध्यान मत दीजिए। बस कलम उठा लें - और लिख डालें जो आपके मन में है।

– श्याम त्रिपाठी

Hindi Chetna is a literay magazine published quarterly in Toronto, Ontario under the editorship of Mr. Shiam Tripathi. Hindi Chetna aims to promote the Hindi language, Indian culture and the rich heritage of India to our children growing in the Canadian society. It focuses on Hindi Literature and encourages creative writers, young and old, in North America to write for the magazine. It serves to keep readers in touch with new trends in modern writing. Hindi Chetna has provided a forum for Hindi writers, poets and readers to maintain communication with each other through the magazine. It has brought many local and international writers together to foster the spirit of friendship and harmony.

HINDI CHETNA
6 Larksmere Court, Markham, Ontario, L3R 3R1
Phone : (905) 475 - 7165 Fax : (905) 475 - 8667
e-mail : hindicehetna@yahoo.ca

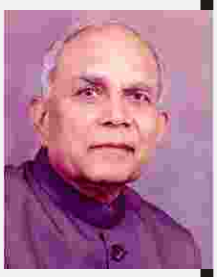

सम्पादकीय

भारतवंशी भारत से दूर रहकर भारत को अपनी जननी की तरह पूजते हैं और अपनी संस्कृति, भाषा, साहित्य, धर्म, अपनी हरिटेज को सुरक्षित रखने का प्रयास करते हैं. लेकिन बहुत दु:ख होता है, जब यह सुनने को मिलता है कि प्रवासी साहित्य में कुछ दम नहीं, उसमें गंभीरता नही, वह भारतीय साहित्य में स्थान लेने के योग्य नहीं, उसमें पाश्चात्यपन है, उसमें प्रौढ़ता की कमी है आदि- आदि. अब हम जब भारत से बाहर रह रहे हैं, तो हमारे साहित्य में बाहरी सभ्यता और संस्कृति की झलक तो अवश्य दिखाई देगी, साहित्य में एक नया दृष्टिकोण तो स्वाभाविक रूप से होगा ही, निश्चय ही लेखक विदेश की धरती की सुगंध भरेंगें और देश काल या परिस्थियों को लेकर अपने विचार अभिव्यक्त करेंगे और क्यों न करें ? साहित्य तो सबको जोड़ता है, निकट लाता है, यह तो प्रेम का एक ऐसा धागा है, जो एक माला की तरह काम करता है, लेकिन भारत के इन विचारकों और आलोचकों को क्या कहा जाए ?

साहित्यकार तो संवेदनशील होते हैं, उनमें स्नेह की गंगा बहती है, वे तो सभी को गले लगाते हैं, लेकिन यहाँ तो बिलकुल विपरीत है. घर में आग लगी हुई है, देश में हिंदी की नींव ढह रही है, बाहर लिखे जा रहे साहित्य को स्वीकार नहीं कर रहे, जबकि विदेशों में हिंदी का काम बहुत बड़े पैमाने पर चल रहा है और लोग हिंदी की तन-मन-धन से सेवा कर रहे हैं. 'हिंदी चेतना' उन्हीं में से एक है जिसने अपने १४ वर्ष के समय में, हिंदी के कई साहित्यकारों को सम्मानित किया है और विदेश की धरती पर शोध साहित्य को जन्म दिया है. आज भारत में कोई भी ऐसी पत्रिका सामने नहीं आई, जिसने कामिल बुल्के की जन्म शती के अवसर पर उनके विषय में दो शब्द लिखे हों.

प्रभात प्रकाशन के 'साहित्य अमृत' के जनवरी अंक में आदरणीय त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी जी ने अपने सम्पादकीय में स्पष्ट शब्दों में लिखा है, 'खेद के साथ कहना पड़ता है कि हिंदी जगत में कहीं भी पूरे वर्ष कामिल बुल्के के ऊपर कोई भी आयोजन नहीं किया गया.' यह पढ़ कर मुझे बहुत दु:ख हुआ कि एक प्रवासी साहित्यकार के साथ ऐसा घोर अन्याय और निरादर ! साहित्यिक साधक होने के नाते मुझे यह बात बहुत खली. 'हिन्दी चेतना' उत्तरी अमेरिका की ही एकमात्र पत्रिका ने कामिल बुल्के के सम्मान में जुलाई २००९ का विशेष अंक निकाला, जो उन्हीं को समर्पित था.

आज भारत में हिंदी की सुरक्षा के लिए कोई ठोस काम नहीं हो रहा है. भारत के गाँवों को छोड़कर हर जगह अंग्रेज़ी का प्रचार हो रहा है, कुछ लोग सरकार को हिंदी की ग़लत तस्वीर दिखाकर इधर-उधर एक सम्मेलन हिंदी के नाम पर कर देते हैं और उसमे जो निर्णय लिए जाते हैं, उन पर भी कोई सक्रिय काम नहीं होता. जिस संघर्ष के साथ हिंदी की गाड़ी चल रही है, वह बहुत धीमी है. केवल सिनेमाघरों में हिंदी की फिल्में हिंदी बोलतीं हैं. इसमें कोई बुराई नहीं, लेकिन क्या किसी भाषा का जीवन इस प्रकार चल सकता है ? दिल्ली की गलियों में हिंदी की जगह अंग्रेज़ी गूँज रही है ? बहुत विकट समस्या आने वाली है हमारे देश पर, अगर हिंदी को न बचाया गया. युवा पीढ़ी तो पहले ही इससे दूर होती जा रही है और अगर पुरानी पीढ़ी भी आलोचना-प्रत्यालोचना में लगी रही और संकीर्ण ह्रदयों से ही परखती रही तो हिन्दी की वृद्धि, समृद्धि कैसे होगी ?

गाँधीजी और विनोवाजी के देश में हिन्दी की पुस्तकों और पत्रिकाओं के पाठक कम होते जा रहें हैं, इसका कारण और दोषी भारत की सरकार है या हिंदी का समाज... जिसने हिंदी की यह दशा कर दी है ? मेरा बस इतना ही निवेदन है कि भारतीय साहित्यकारों को प्रवासी साहित्यकारों के प्रति संवेदनशील होना पड़ेगा, आख़िरकार सभी भारत की ही सन्तानें हैं...

आपका

श्याम त्रिपाठी

हिन्दी चेतना को पढ़िये, पता है :
http://hindi-chetna.blogspot.com

हिन्दी चेतना की समीक्षा अवश्य देखें :
http://KathaChakra.blogspot.com

घर बैठे पुस्तकें प्राप्त करें :
http://www.pustak.org

हिन्दी चेतना को आप ऑनलाइन भी पढ़ सकते हैं :
Visit our Web Site :
http://www.vibhom.com
or home page पर
publication में जाकर

पाती

सुधा जी,

'हिंदी चेतना' का नया अंक देखा ही नहीं, पढ़ा भी। 'हिंदी चेतना' का अपना इतिहास है और यह बहुत ही संघर्षशील, रचनात्मक, तथा अस्मिता की पहचान से युक्त है। और आप जैसा युवा सोच का रचनाकार इसे नए रूप में प्रस्तुत करने को प्रयत्नशील हुआ है। परिवर्तन सृष्टि का नियम है और ये परिवर्तन ही हमारे जीवन में बसंत भी लाता है।

आप निरंतर प्रयत्नशील रही हैं कि प्रवासी साहित्य को न केवल एक दिशा दी जाए, अपितु उसे भौतिक सरहदों को तोड़ कर विस्तृत भी किया जाए। साहित्य के प्रति आपमें मैंने एक जनून देखा है। जिस प्रकार आप घंटो फोन पर, बिना इस बात की चिंता किए कि विदेश में फोन करने पर कितना खर्चा होगा, जबकि भारत में लोकल फोन करने वाले अक्सर इस चिंता से ग्रसित रहते हैं, साहित्य संबंधी अपनी चिंताओं से दूसरों को भी चिंतित करती हैं वो, इस बात को रेखांकित करता है कि साहित्य के प्रति आप कितनी गंभीर हैं।

श्याम जी ने अपने अथक श्रम से इसे जो स्वरूप दिया है और इसे एक महत्वपूर्ण पत्रिका बना दिया है, मुझे पूरा विश्वास है कि आपका श्रम इसमें सुहागे का काम करेगा और यह सोना और निखरेगा। सामग्री के चुनाव में गंभीरता और वैविध्य है।

प्रेम जनमेजय, भारत

माननीय सुधा जी

सादर नमस्कार.

नेट पर हिंदी चेतना का नया अंक देखा। पत्रिका बहुत ही सुदर व आकर्षक हो गई है। साथ ही सामग्री भी उच्च स्तरीय है। इतने अच्छे कार्य के लिए मेरी ओर से बधाई स्वीकार करें।

श्री त्रिपाठी जी को भी मेरी ओर से पत्रिका के नए स्वरूप की बधाई अवश्य ही दे दें।

अखिलेश शुक्ल, भारत

दीदी प्रणाम

अभी तो केवल पत्रिका का गेटअप देखा है रचनाओं पर नहीं गया। किन्तु एक ही बात कहना चाहूंगा अद्‌भुत। सचमुच बहुत ही सुंदर तरीके से डिजाइन की गई है पूरी पत्रिका। चूंकि स्वयं डिजाइन से जुड़ा हूं इसलिये कह सकता हूं कि पूरी पत्रिका ही सुगठित तरीके से बनाई गई है। पिछले दो अंकों को देख कर पत्रिका को लेकर जो नकरात्मक विचार बना था वो समूल नष्ट हो गया है।

सचमुच यही गुणवत्ता हो तभी कोई पत्रिका पढ़ने योग्य बनती है। बस एक बात ज़रूर कहना चाहूंगा जो मुझे मेरे गुरू ने कही थी वो ये कि संपादक को अपनी रचनाएं अपनी ही पत्रिका में छापने से सदैव बचना चाहिये। ये मेरा सुझाव है यदि आपको ठीक लगे तो आगे से ध्यान दें। बाकी बधाई।

पंकज सुबीर, भारत

सुधा जी,

आपकी कर्मठता व प्रतिबद्धता साफ झलक रही है. नया आवरण पृष्ठ, साज-सज्जा, आलेख व अन्य सामग्री का चुनाव, सभी बढ़िया लगे. मेरी बधाई व सद्‌भावना स्वीकार करियेगा.

लावण्या, अमेरिका

सुधा जी,

ऐसा लगता है कि नया श्रृंगार हुआ है कविता के साथ जो चित्र दिये गये हैं उससे कविता और निखर गई है. सभी कुछ उच्च स्तरीय है. सभी कुछ पढ़ा. एक किसी के बारे में क्या कहूं, सब सुंदर, अति सुंदर.

रचना, अमेरिका

Dear Sudha Ji,

Wonderful magazine. I am going to use some stories, poems and articles in my advanced Hindi class.

I have forwarded it to my advanced Hindi class students.

Radha, USA

सुधा जी

हिन्दी चेतना का नया अंक देखा. अंक की साज-सज्जा और रचनाओं के प्रकाशन का व्यवस्थित ढंग सुन्दर है. रचनाएं पढ़ नहीं पाया लेकिन प्रथम दृष्टया अंक अच्छा प्रतीत हुआ. कुछ बातें कहना चाहता हूं. यद्यपि यह एक अनधिकार चेष्टा ही है, लेकिन चूंकि मेरी एक-दो रचनाएं इसमें प्रकाशित हुई हैं, अत: इसके एक लेखक के रूप में यह कहना उचित लगा.

मेरा मानना है कि किसी पत्रिका में परामर्श मंडल या समिति या मार्गदर्शक मंडल के अंतर्गत जब कुछ लोगों को शामिल किया जाता है, तब उसके लिए लेखकों के सहयोग की सीमाएं सीमित हो जाती हैं. वैसे भी परामर्श मंडल की न कोई भूमिका होती है और न ही वे वैसी कोई भूमिका निभाते हैं. राजनीति अलग होने लगती है. पत्रिका का उद्देश्य अपने लिए अधिक से अधिक रचनाकारों का उत्कृष्ट रचनात्मक सहयोग प्राप्त करना होना चाहिए और यह तभी संभव हो सकता है, जब इन मंडलों से बचा जा सके.

दूसरी बात यह कि पुस्तकों के कवर प्रकाशित करते समय उनका परिचय अलग से भी दिया जाना चाहिए, जिससे पाठकों को उनके प्रकाशन, मूल्य, पृष्ठ संख्या आदि की जानकारी भी मिल सके. कवर मात्र पर्याप्त परिचय नहीं है.

आशा है मेरे सुझावों पर सम्पादक मंडल के विचार करेगा.

रूपसिंह चन्देल, भारत

सुधा जी,

बहुत साल पहले मैंने गोमुख से गँगा का उद्गम और उत्तर काशी के बाद धीरे-धीरे उस पावन नदी का विस्तार और विकास देखा था। तब हृदय में विस्मय के साथ-साथ अह्लाद का जो अनुभव हुआ था, कुछ वैसा ही आनन्दमय अहसास 'हिन्दी चेतना' को धीरे-धीरे विकासोन्मुख होते देख कर हो रहा है। आपने इस पत्रिका के द्वारा पूरे विश्व के रचनाधर्मियों को एक सूत्र में पिरो कर तथा साहित्य की लगभग सभी विधाओं की सामग्री से पाठकों को परिचित करवाकर पत्रिका के क्षितिज को जितना विस्तार दिया है उसके लिये आप तथा आपके सभी सहयोगी हार्दिक बधाई के पात्र हैं। आपके हाथ में पत्रिका की बागडोर तथा आदरणीय श्री विजय चोपड़ा जी का आशीर्वाद तथा पूर्ण सहयोग 'हिन्दी चेतना' को आकाश की अछूती ऊँचाइयों तक ले जाएगा ऐसा मेरा विश्वास है। एक बार फिर से आप सभी को मेरा धन्यवाद तथा स्वर्णिम भविष्य के लिये शुभकामनाएँ।

शशि पाधा, अमेरिका

प्रिय सुधा जी,

हिंदी चेतना का नया अंक देवी नागरानी द्वारा प्रेषित कल मिल गया था. आप कुशल संपादिका हैं, यह हिंदी चेतना की सारी की सारी उच्चस्तरीय सामग्री को पढ़ कर ही आभास हुआ है. इतनी सुन्दर और सौम्य पत्रिका को काला टीका लगा कर रखियेगा. हिंदी चेतना बकौल दाग देहलवी -- *साथ शोखी के कुछ हिजाब भी है / इस अदा का कहीं जवाब भी है.*

प्राण शर्मा, यू.के.

'चेतना' रूपी विहग के पंख विकसित हो गए,
समय के अनुरूप ही सौंदर्य चित्रित हो गए.
व्योम विस्तृत चाहिए, अब पंख फैलेंगे जहां ,
धरनि से नभ तक पसारा, ज्ञान पसराएंगे वहां.
प्रगति के सोपान चढ़, निखरी है 'हिन्दी चेतना'
भाव-भीना रूप उद्धृत मूल की संचेतना.
आज का दर्पण, विगत के ज्ञान का आधार है,
नमन 'हिन्दी चेतना' से सात्विक प्रासार है.

डॉ. मृदुल कीर्ति, अमेरिका

प्रिय सुधा जी,

हिन्दी चेतना का जनवरी 2010 अंक मिला. धन्यवाद. कहानियां बहुत ही अच्छी लगीं. *अबके बिछुड़े* और *जहान से चले थे* में ठीक समय पर आवाज़ ना दे पाने, महसूस न कर पाने अथवा न सुन पाने के पश्चाताप का बड़ी खूबसूरती से चित्रण किया गया है. *अमेरिका वाला* युद्ध और इंसानियत को संवेदनशीलता से रेखांकित करने वाली मर्मस्पर्शी कहानी है. *लड़की थी वह* आधी दुनिया को अवांछित मानने वाले रूढ़िवादी समाज को प्रतीकात्मक तरीके से चित्रित करती है. पत्रिका के आगामी अंक की प्रतीक्षा रहेगी.

डॉ. मधु संधु, भारत

श्याम त्रिपाठी जी एवं सुधाजी

जनवरी 2010 का नवनीतम अंक 'हिंदी चेतना' नवनीतम संचारित रूप में हासिल हुआ. अरविन्द नराले जी मुखपृष्ठ पर साहित्य के परिदों को एक नया विस्तृत आकाश देने में सफल हुए हैं. बदला हुआ स्वरूप लेखन कला की सभी कलाओं से संस्कृति और साहित्य की समृद्धि को नयी दिशा प्रदान कर रहा है, जिसमें समाहित है सुंदर कहानियाँ, आलेख, कवितायें, नेट पर ब्लॉग्स की चर्चा, अंतर्मन के विषय में वैचारिक ऊर्जा पर मृदुल कीर्ति जी का लेख, व्यंग्य, संस्मरण, लघुकथा, साहित्यिक समाचार, समीक्षा और चित्र काव्य शाला.

एक बात ध्यान खींचती रही कि निष्पक्ष भाव से इस सम्पूर्ण पत्रिका में भारत से और प्रवास की कई दिशाओं से परिदे शामिल हैं, जिनकी उड़ान को एक नया क्षितिज मिला है.

अंजना जी का संस्मरण प्रवासी लेखकों में एक नए निर्माण की ऊर्जा में बढ़ौती की दिशा दिखा रहा है और लक्ष्मीनारायण गुप्त जी का लेख भारतीयता की मशाल को जलाये रखने के लिए प्रवासी भारतीयों के योगदान को सन्मानित कर रहा है. ऐसे लेखों से मनोबल की नींव पुख्ता होती है. हिंदी चेतना की समस्त टीम को बधाई एवं शुभकामनाएँ.

देवी नागरानी, न्यूजर्सी, अमेरिका

विश्व के विदेशी हिंदी साहित्यकार

अपनी 'उत्तरी अमेरिका के हिंदी साहित्यकार' पुस्तक के प्रकाशन की सफलता के पश्चात अब मैं 'विश्व के विदेशी हिंदी साहित्यकार' पुस्तक की परियोजना पर कार्य कर रहा हूँ. यदि आपकी दृष्टि में कोई ऐसा हिंदी साहित्यकार आपके देश में है, जिसकी साहित्यिक उपलब्धियों एवं सेवाओं के आधार पर इस पुस्तक में उन्हें स्थान दिया जाय तो कृपया उनका नाम, दूरभाष और ईमेल आदि सूचनाएं मुझे भेजकर इस महत्वपूर्ण परियोजना की सफलता की दिशा में अपना बहुमूल्य योगदान दें.

श्रीनाथ प्रसाद द्वेवेदी , अध्यक्ष , हिंदी साहित्य परिषद् केनेडा
604- 507 -3099 spdwivedi@shaw.ca

Indo-Canada
Income Tax Services Ltd.

Income Tax / Book keeping Experts
Management Consultants

☎ 905-264-9599

905-264-9587

15 Ayton Crescent, Woodbridge, Ontario L4L 7H8

HOME & AUTO INSURANCE

GOOD RATES FOR
DRIVERS WITH ACCIDENTS
&
CONVICTIONS

EXCELLENT RATES FOR
5-10 STAR DRIVERS
MAY QUALIFY FOR
UPTO
50% DISCOUNT

SUDESH KAMRA
TEL: 416-666-7512

sdshkam@yahoo.ca

◆ लेखिका : इन्द्रा (धीर) वडेहरा, कैनेडा

मूल प्रसंग : भक्त, भक्ति-योगी और उसका विश्वास

प्रश्न : हिंदी चेतना की बात हो रही थी, बात चेतना शब्द की ओर मुड़ी तो हमारे एक सज्जन दोस्त गंभीर मुद्रा में बोले, 'भक्त ही निखरी हुई चेतना का मालिक होता है!' मुझे आज तक यह बात समझ नहीं आई कि भक्त कौन है? आप इस विषय में मेरी मदद करेंगी? भक्त के कुछ ऐसे लक्षण कहेंगी जिससे भक्त की ठीक-ठीक छवि मेरे हृदय पर अंकित हो?

प्रोफ़ेसर बलबीर कौर, भारत

उत्तर : बलबीरजी, आपके सज्जन दोस्त ने ठीक ही कहा है। भक्त जागरुक है इसलिए वह निखरी हुई चेतना का मालिक है। वह अपनत्व का विस्तार करता हुआ, विश्व चेतना से एक होता चला जाता है। इससे पहले कि हम भक्त की परिभाषा तक पहुंचें, इसी सन्दर्भ में किया गया एक और प्रश्न ले रही हूँ।

प्रश्न : भक्ति योगी को किस कसौटी पर खरा उतरना चाहिए? मुझे कर्म-योग और ज्ञान-योग के विषय में तो थोड़ी बहुत जानकारी है. लेकिन भक्ति योगी के विषय में जानकारी बहुत धुंधली-सी है। आप मुझे इस विषय में कुछ ऐसा बताएंगी जो मेरे लिए लाभकारी हो?

डॉ. संतोष कुंद्रा, भारत

उत्तर : संतोषजी, भक्त को तो निष्ठा की कसौटी पर ही खरा उतरना होता है। डॉ. कुंद्रा और प्रोफ़ेसर बलबीर, इससे पहले कि किसी उदाहरण के माध्यम से भक्त का व्यक्तित्व आपके अंतरपट पर उघाड़ने का प्रयत्न करूँ, तीनो योग संक्षेप में जान लेने आवश्यक समझती हूँ।

स्वामी रामसुख दास जी कहते हैं : अपने उद्धार करने के लिए मनुष्य को तीन प्रकार की शक्तियाँ प्राप्त हैं।

करने की शक्ति - (बल) - संकल्प प्रधान

जानने की शक्ति - (ज्ञान) - मेधा प्रधान

मानने की शक्ति - (विश्वास) - भावना प्रधान

करने की शक्ति नि:स्वार्थ भाव से संसार की सेवा करने के लिए है, जो कर्म योग है। जानने की शक्ति अपने स्वरूप को जानने के लिए है, जो ज्ञान योग है और मानने की शक्ति भगवान को अपना तथा अपने को भगवान का मानकर सर्वथा भगवान के समर्पित होने के लिए है, जो भक्ति योग है। जिसमें करने की रुचि अधिक है, वह कर्म योग का अधिकारी है। जिसमें अपने आपको जानने की जिज्ञासा अधिक है, वह ज्ञान योग का अधिकारी है। जिसका भगवान पर श्रद्धा-विश्वास अधिक है, वह भक्ति योग का अधिकारी है। यह तीनों ही योग-मार्ग परमात्म प्राप्ति के स्वतन्त्र साधन हैं।

डॉ. कुंद्रा और प्रोफ़ेसर बलबीर, आपके मूल प्रश्न भक्त पर हैं, इसलिए अब हम भक्तियोग के विषय में ही बात करते हैं। विश्वात्मा बावरा जी एक भक्त का वर्णन किया करते थे : भारत में ऋषिकेश से ऊपर नौ मील की दूरी पर एक नीलकंठ महादेव नामक तीर्थ स्थान है। वहां पर कालूराम नाम का एक भक्त रहता है। वह रास्ता साफ़ करता है। नीलकंठ महादेव के लिए तीन तरफ से रास्ता आता है। सबेरे चार बजे उठकर कालूराम भक्त रास्ता साफ़ करने को लग जाता है। प्रात: होते-होते तीनों तरफ वह आधा मील तक रास्ता साफ़ कर देता है। यही उसका नित्यकर्म है। नीलकंठ महादेव तीर्थ स्थान में बड़े से बड़े महात्मा भी जब आते हैं तो कालूराम का दर्शन नहीं हुआ तो वह अपनी यात्रा असफल मानते हैं।

वह देह पूजनीय है इसलिए बड़े-बड़े संत, विद्वान भी कालूराम को नमस्कार करते हैं।

बावरा जी का कहना है : 'लोग उसके पांव छूने को दौड़ते हैं तो वह कहता है, नहीं बाबू, मैं तो हरिजन हूँ, मेरे को नहीं छूना!' जब वह ऐसा कहता है तो लोग रो देते हैं उसकी सरलता पर। बड़े-बड़े संत उसे सिद्ध पुरुष मानते हैं।

क्यों? वह झाड़ू ही तो लगाता है। वह तो मंदिर में भी झाड़ू नहीं लगाता, फिर क्या विशेषता है उसके झाड़ू लगाने में? भगवान के भक्त इस रास्ते से आते हैं, उन्हें किसी प्रकार का कष्ट न हो यह उसकी भावना है। वह बिना कुछ चाहे पर-हित किए जा रहा है।

इस संदर्भ में गोस्वामी तुलसीदास जी कहते हैं : 'पर हित सरिस धर्म नहिं भाई, पर पीड़ा सम नहिं अधमाई...'

भाव : दूसरों के उपकार के बराबर धर्म नहीं है और दूसरों को कष्ट देने के बराबर नीचता नहीं।

कालूराम ने जीवनभर उत्तम कर्म किया है। वह तो समर्पण की भावना से दूसरों की सुख-सुविधा के लिए बिन फल चाहे कर्म किए जा रहा है। परिपक्व हुई भगवातार्थ भावना का चलता फिरता दृष्टांत 'कालूराम' भक्त की स्पष्ट परिभाषा है।

कालूराम अपनी आत्मा में स्थित है, वह अपने आप में तृप्त है। लोग भक्त कालूराम को सम्मान की दृष्टि से देखते हैं फिर भी उसे अहं छू नहीं पाता। यह सारे लक्षण ज्ञान-योगी के हैं। उसका करने में रुझान है, लेकिन कर्तापन का त्याग है, वह विश्व हित के लिए कर्म किए जा रहा है यह सारे लक्षण कर्म योगी के हैं। फिर वह भक्त कैसे?

डॉ. कुंद्रा और बलबीर जी, भक्त सरल है, भक्त समर्पित है भक्त अहम् भाव से दूर है और विशेष बात तो यह है कि भक्त दूसरों के जीवन के लिए उपयोगी भी है।

भक्त की प्रसन्नता भगवान के साथ रिश्ते के तंतु बुन लेने में है। समर्पित भावना से भरा हुआ अन्त:करण, प्रभु के साथ रिश्ते का भाव ही भक्त के अंत:करण की सुख और शान्ति का साधन है।

संक्षेप में एक पौराणिक कथा का वर्णन करना चाहूँगी :

एक सज्जन नें बहुत सी बकरियाँ पाल रखी थीं। समय ऐसा आया कि उसकी एक-एक करके बकरियाँ मरने लगीं। जब एक बकरी रह गई तो वह चिंतित हुआ कि यदि वह भी मर गई तो वह क्या करेगा। इस संताप को मिटाने वह एक साधु के पास गया और अपनी समस्या बताई। साधु ने कहा कि जरा यह एक पौंड़ आटा इस घर में छोड़ आओ फिर समाधान निकालते हैं। वह सज्जन उस घर पर पहुँचा और उस घर की लक्ष्मी दरवाजे पर आई तो उसने साधु का संदेश देते हुए आटे का छोटा-सा झोला आगे कर बताया कि महात्मा जी ने इसे भेजा है। गृह लक्ष्मी ने कहा ठहरो और अपने बेटे को आवाज़ लगा कर कहने लगी कि बेटा जरा देखो रसोई में आज के लिए अन्न है? कुछ क्षण बीते तो बेटे नें आवाज़ देकर कहा, 'माँ आज के लिए है।'

गृह लक्ष्मी ने उस सज्जन से विनय की, 'यह आटा कहीं और दे जाओ।'

जरा सोचो, '...एक वक्त की रोटी के लिए आटा है, इसलिए आटा कहीं और दे आओ!' कैसा अटल विश्वास है उस निराकार प्रभु पर।

कबीर जी कहते हैं : 'सांई इतना दीजिए, जामें कुटुंब समाय। मैं भी भूखा न रहूं, साधु न भूखा जाय।

हरिजन गांठि न बाधहीं उदार समाना लेय। आगे पीछे हरि खड़े, जो मांगै सो देय।

कबीर जी स्पष्ट शब्दों में कहते हैं : भक्त प्रभु से उतना ही मांगता है जितने से उसके परिवार का निर्वाह हो सके और वह घर पर आए साधु को भी भोजन करवा सके। जिसके हृदय में विश्वास का बसेरा है, जिसे प्रभु की सत्ता का अनुभव है उसे ज्यादा लेने से भी क्या प्रयोजन? उसके तो हृदय में द्वंद्व की ही कमी है।

प्रोफ़ेसर बलबीर, आप ने भक्त के लक्षण मांगे हैं : आज के लिए शुक्र गुज़ार तो हो लूं, कल नहीं मिलेगा तो उसकी मर्जी। कदम-कदम पर प्रभु का धन्यवाद करते हुए उस पर एक अटूट विश्वास कायम रखना भक्त का लक्षण है। जब जरूरत होगी प्रभु देंगे, यह विश्वास भक्त की जागीर है। देखा जाए तो यह प्रमाण क्या कम है कि प्रभु हमारे खाने-पीने का प्रबंध पहले करते हैं, और फिर हमें जन्म देते हैं।

प्रोफ़ेसर बलबीर और डॉ. कुंद्रा जी, जहां तक मानने की शक्ति की बात आती है, इस विषय में श्री अरविंदो कहा करते थे कि जीवन में बार-बार हमें प्रभु की सत्ता की झलक मिलती है और कई बार हमारी समझ हमें यह भी बताती है कि यह बात प्रभु के किए बिना हो ही नहीं सकती थी लेकिन इंसान उसकी सत्ता मानने को तैयार ही नहीं वह तो जानकर भी उसे मानने तो तैयार नहीं, इसलिए वह फिर से उसी प्रश्न को ले बैठता है - भगवान है भी या नहीं?

कहने का अभिप्राय यह है कि ना मानने की हठ है तो जानकर भी शंका करने से कोई रोक नहीं सकता और इसके लिए भगवान ने ही हमें पूरी छूट दे रखी है।

आइंस्टाइन का कथन है कि मानव ब्रह्मांड का एक हिस्सा है, मानव के विचार और उसकी भावनाएं ही उसे यथार्थ-चित्रण से ग़लत दृष्टिकोण की और ले जाती है और माया से भ्रमित वह अपने आपको सबसे अलग-थलग मान कर चलने लगता है। यह विचारों और भावनाओं द्वारा बुना हुआ भ्रमित जाल ही उसे अपने आप में कैदी बना छोड़ता है। हमारा कर्तव्य विश्व के प्रति संवेदन-शील हो, अपनत्व का दायरा विकसित करते हुए अपने आपको इस माया-संबंधी भ्रम जाल से मुक्त करवाना है।

आइंस्टाइन का कथन उद्धरित करने से मेरा अभिप्राय भक्ति योगी की ओर संकेत करने से है, भक्ति योगी कहो या भक्त, वह दूसरों को गले लगाते हुए, दूसरों की जरूरत को अपनी जरूरत मान, अपनत्व का दायरा विकसित करते हुए, वह अपने आपको माया के भ्रम-जाल मुक्त करता चला जाता है।

अंत में मैं तो यही कहना चाहूंगी कि शांत-चित्त, आत्म-स्थित हो विश्वास से जीना एक उच्च दृष्टिकोण रखकर जीवन बसर करना है। मैंने जीवन जिया है और लम्बे जीवन का अनुभव एक बात स्पष्ट कर गया है कि उस पर विश्वास एक अटूट भरोसा तो है ही, विश्वास एक स्वस्थ दृष्टिकोण भी है। लेकिन, उस निराकार प्रभु पर ऐसा अटल विश्वास बनाए नहीं बनाता, ऐसी पावन सोच, ऐसा स्वस्थ दृष्टिकोण, ऐसा उच्च कोटि का समर्पण उसकी कृपा बरसे तभी होता है यह मेरी अपनी मान्यता है। ◆◆◆

Beacon Signs
1985 Inc.

7040 Torbram Rd. Unit # 4, Mississauga, ONT. L4T 3Z4

Specializing In:

Illuminated Signs awning & pylons

Channel & Neon letters

Banners

Architectural signs

VEHICLE GRAPHICS

Engraving

Silk screen

Silk screen

Design Services

Precision CNC cutout plastic, wood & metal letters & logos

Large format full Colour imaging System

SALES – SERVICE - RENTALS

Manjit Dubey

दुबे परिवार की ओर से हिन्दी चेतना को बहुत बहुत शुभकामनायें

Tel: (905) 678-2859 Fax: (905) 678-1271

E-mail: beaconsigns@bellnet.ca

संस्मरण

एक दरवाजा बंद हुआ तो दूसरा खुला

डॉ. अंजना संधीर, भारत

(गतांक से आगे)

एक प्रसंग याद आ रहा है. एक दिन एक महिला-संस्था की तरफ से एक फोन आया. उस महिला ने कहा, जी मैं 'प्रगति महिला संस्था' की निदेशक बोल रही हूँ. हमने अभी नई-नई महिला संस्था शुरू की है, किसी ने आपका नाम व फोन नंबर दिया है और कहा है कि आप बहुत विदुषी हैं, लिखती हैं तथा भारत में भी, आप शिक्षा कार्य से सम्बंधित रही हैं. आप महिला-समस्याओं के लिए बराबर लिखती रही हैं. संस्थाओं से जुड़ी रही हैं. मुझे अपने ही बारे में ये सब सुनकर बड़ा आश्चर्य हो रहा था, कि न जान न पहचान ये क्या माज़रा है? अच्छा भी लग रहा था, मैंने धन्यवाद किया और कहा - जी मैं आपकी क्या मदद कर सकती हूँ और आपका नाम क्या है? नाम उन्होंने अपना नाम बताया माला देसाई और कहा कि हमारी संस्था नई है, हमें स्वयंसेवी जागरूक महिलाओं की ज़रूरत है. आप हिंदी में लिखती हैं, तो एक तो आप संस्था के फ्लायर वगैरह हिंदी में तैयार करके हमारी मदद कर सकती हैं तथा दूसरा, जैसा कि आप पढ़ाती रही हैं तो हमने प्रौढ़-शिक्षा यानी 'वुमन एडल्ट एज्युकेशन' के कार्यक्रम का प्रोजेक्ट लिया है. क्या आप उन्हें अंग्रेज़ी बोलना, पढ़ना, लिखना सिखा सकती हैं? हर शनिवार, रविवार को दो घंटे की क्लास है.

फिर रुक के वो बोलीं, 'क्योंकि दक्षिण एशिया से कई अनपढ़ या कम पढ़ी-लिखी औरतें आतीं हैं तो अंग्रेजी न आने के कारण बहुत मुश्किल में पड़ जाती हैं. अगर वे थोड़ी बहुत व्यवहारिक अंग्रेज़ी सीख लें तो यहाँ की मुख्यधारा में आ जायेंगी, मुश्किलें थोड़ी कम हो जाएँगी.'

फोन रखने से पहले उसने जगह का पता बताया और कहा- 'नहीं कोई बात नहीं, मुझे ख़ुशी होगी अगर मेरी शिक्षा, किसी काम आएगी. आजकल मैं घर पर ही हूँ. कोई नौकरी भी नहीं कर रही हूँ, ठीक है कल आपको फोन करूंगी.' कभी-कभी मुझे लगता है कि काम करने वालों को काम भी ढूंढ़ लेता है.

कभी मैं काम को ढूँढ लेती हूँ तो कभी काम मुझे ढूंढ़ लेता है. ये वे दिन थे जब यहाँ नितांत अकेली और खाली थी मैं. पति सुबह काम पर चले जाते और शाम पांच बजे वापस आते. सारा-सारा दिन खाली, खाना बनाने में कितना समय लगता है? कुछ हिंदी की किताबें, जो साथ लाई थी, वे पढ़ चुकी थी, बस कविताएँ लिखती रहती थी. यहाँ का जीवन रास नहीं आ रहा था. इन्हीं दिनों 'अमेरिका हड्डियों में जम जाता है' कविता लिखी थी क्योंकि ऐसे अनुभव आते ही होने लगे थे, जिसे एक ही रास्ता था व्यक्त करने का. खैर मैंने शाम को, आते ही पति से सलाह की. वे बोले- 'यहाँ भी चैन नहीं है. ये सब करने की क्या जरूरत है?' मैंने कहा- 'खाली तो बैठी हूँ, कोई नौकरी तो करती नहीं, फिर घर के बिलकुल पास है, चल कर जाऊँगी और आ जाऊँगी. औरतों को पढ़ाना ही तो है, मेरा दिल भी लग जाएगा, दो घंटे की ही तो बात है, अपने ही लोगों की मदद भी थोड़ी कर सकने की क्षमता, अगर भगवान ने दी है तो क्या हर्ज़ है.' खैर उन्होंने

फिर रुक के वो बोलीं, 'क्योंकि दक्षिण एशिया से कई अनपढ़ या कम पढ़ी-लिखी औरतें आतीं हैं तो अंग्रेजी न आने के कारण बहुत मुश्किल में पड़ जाती हैं. अगर वे थोड़ी बहुत व्यवहारिक अंग्रेज़ी सीख लें तो यहाँ की मुख्यधारा में आ जायेंगी, मुश्किलें थोड़ी कम हो जाएँगी.'

कहा- 'देख लो तुम्हारी तबीयत तुम्हें जाने देगी ?'

उन दिनों मेरी बड़ी बेटी स्तुति होने वाली थी. पहली संतान थी. वे अपनी जगह ठीक भी थे, लेकिन मेरी बात पर थोड़ा हँसते हुए बोले- 'तुम नहीं मानोगी और ये काम भी तुम्हें कहीं न कहीं से ढूँढ़ ही लेता है, चलो ठीक है, अगर तुम चाहती ही हो तो... ओके.'

मैंने दूसरे दिन सुबह प्रगति के प्रौढ़ शिक्षा की कक्षा लेना स्वीकार कर लिया. इस तरह घर से चल कर कक्षा में जाती. हिंदी में अंगरेज़ी पढ़ाती. कुछ गुजराती व पंजाबी महिलाएँ थीं, बंगलादेशी, पाकिस्तानी व आगाखानी महिलाएँ भी थीं. जब मैं गई तो सिर्फ तीन महिलाएँ रजिस्टर्ड थीं, लेकिन धीरे-धीरे कक्षा बड़ी होती गयी.

एक श्वेत लड़की लिंडा हमारे साथ थी. ए.बी.सी. अंग्रेज़ी-वर्णमाला से पढ़ने, लिखने के शुरूआत हुई. एक दिन हँसते हुए लिंडा ने कहा- 'तुम्हारी कक्षा बहुत बड़ी हो गयी है और ये महिलाएँ थोड़ी बहुत बोलने और समझने लगी हैं.' मैंने भी चाय पीते हुए कहा- 'अंग्रेज़ी को अंग्रेज़ी के माध्यम से अगर हम पढ़ाएँ तो ये कभी नहीं सीख पाएँगी, क्योंकि जब तक शब्द का अर्थ इनको इनकी भाषा में नहीं बताया जाएगा जैसे कि वाटर, पानी को कहते हैं, जब तक यह नहीं पता चलेगा, तब तक आप वाटर-वाटर करते रहिए, इन्हें कुछ पता नहीं चलेगा, फिर व्याकरण बहुत मुश्किल है.' तभी उसने ज़ोर से कहा- 'तभी तो ये बात है.' मैंने कहा -'हाँ, उन्हें उनकी भाषा में सिखाती हूँ, इसीलिए वे जल्दी सीख रही हैं.' कभी कोई शब्द गुजरती, उर्दू, पंजाबी भाषा में बता देती, हिंदी में तो बताती ही थी और वे तुरंत समझ जातीं. मुझे पढ़ाने में बहुत मज़ा आता था, क्योंकि वर्षों से यही मुख्य काम रहा है जीवन में. क्लास भी बड़े मज़े की थी. कुछ युवा माताएँ भी आती थीं, स्ट्रोलर में बच्चे होते, पर्सों में किताब के साथ-साथ दूध या जूस या पानी की बोतलें, डाइपर वगैरा होते. बच्चों के कारण कभी-कभी कक्षा में शोर होता तब 'प्रगति' की निर्देशक माला देसाई ने ज़िम्मेदारी ले ली कि जब माताएँ पढ़ रही हों, तो वे दो घंटे बेबी सिटिंग करेंगी.

बस फिर क्या था... हमारी क्लास चल निकली. कक्षा में मेरी माँ की उम्र की औरतें भी थीं और 20-22 साल की नव विवाहित भी, दूरदराज़ के गाँवों से शादी करके अमरीका आयी युवतियाँ भी थीं. पढ़ाते-पढ़ाते यह एक परिवार-सा बन गया था हमारा. वे बड़ा प्यार तथा आदर करती थीं. सब

बस फिर क्या था... हमारी क्लास चल निकली. कक्षा में मेरी माँ की उम्र की औरतें भी थीं और 20-22 साल की नव विवाहित भी, दूरदराज़ के गाँवों से शादी करके अमरीका आयी युवतियाँ भी थीं. पढ़ाते-पढ़ाते यह एक परिवार-सा बन गया था हमारा. वे बड़ा प्यार तथा आदर करती थीं. सब 'टीचर-टीचर' करती थी और पूछा करती थीं कि क्या हम सचमुच सीख जाएँगी.

'टीचर-टीचर' करती थी और पूछा करती थीं कि क्या हम सचमुच सीख जाएँगी. कभी-कभी कहती आपका बच्चा तो बहुत होशियार होगा, देखो पेट से ही पढ़कर आएगा और हम सब हँस पड़ते. मुझे पढ़ाते हुए दो-तीन महीने हुए होंगे कि एक दिन माता जी से भारत फोन पर बात हुई. वे अक्सर पूछा करती 'कोई शुभ समाचार हो तो बताना जल्दी.' मुझे शर्म आती थी इसलिए मैंने अभी तक उन्हें बताया नहीं था, लेकिन इसी दौरान माँ ने फिर पूछा 'मुझे नानी कब बना रही हो?' और मेरे मुख से निकल गया 'आप जल्दी ही नानी बनने वाली हैं.' ख़ुशी से माँ की आवाज़ ही बदल गयी और प्रश्न-पर-प्रश्न. मैंने कहा, 'दिसम्बर के प्रथम सप्ताह में.' वो गुस्सा हो गईं 'अब बता रही हो, इतने समय से क्यों नहीं बताया.' मैंने कहा माँ, मैं तुम्हें परेशान करना नहीं चाहती थी. जिस दिन से तुम्हें पता चलता उसी दिन से तुम्हारी परेशानी शुरू हो जाती कि मैं अकेली हूँ, कैसे काम करूँगी, कौन मदद करेगा, घर के काम कैसे होंगे. बच्चा होना व उसको देखना कोई आसान नहीं काम है क्या! कुछ गड़बड़ हो गयी तो?

मुझे मालूम है तुम्हें नींद नहीं आएगी. अच्छा अब तुम मेरी चिंता छोड़, ठीक से रहना मेरी प्यारी माँ.' और वो रो-सी पड़ी. 'मैं तेरे किसी काम नहीं आ सकती!' मैंने कहा, 'हाँ, इसीलिए तुम्हें कुछ बताना नहीं चाहती, हो जाता, फिर बता देती.' वे चुप हो गईं, बोलीं, 'अच्छा भगवान से प्रार्थना करुँगी सब ठीक-ठाक हो. जब सातवाँ महीना लगे तो किसी मन्दिर में तुम दोनों जाकर पूजा करवाना, आने वाले बच्चे के लिए आशीर्वाद लेना.' फिर उन्होंने बताया- 'इस तरह का हलवा रोटी आदि का भोजन पंडितजी को करवाना, पूजा, भोजन के बाद दक्षिणा दे पुरखों को प्रणाम करना, मन्दिर में दान दे देना, अब रिश्तेदार तो वहाँ कोई है नहीं जो तुम्हारी गोद-भराई की रस्म पूरी करें. भगवान ही तुम्हारे रक्षक हैं लेकिन गोद-भराई की पूजा ज़रूर करवा लेना. हम यहाँ अपने तरीके से भी कर लेंगे.

मैंने पति से इस बारे में बात की और कहा कि क्यों न माँ योग-शक्ति दुर्गा - मन्दिर में पूजा करवा लें? हम ने फोन किया. उन दिनों माता जी न्यूयार्क में ही थीं. हम मन्दिर गये, पूजा करवाई, आशीर्वाद लिया. उन्हें भोजन करवाया और ख़ुशी-ख़ुशी घर आये. मन में शांति ज़रूर थी लेकिन जब भी खाली होती, तरह-तरह के ख़याल मन में अवश्य आने लगते कि मेरी भाभियों के पहले बच्चों की गोद भराई के समय घर में कैसे-कैसे उत्सव मनाये गये, कैसे उनके आने वाले बच्चों को आशीर्वाद मिले, रिश्तेदार इकट्ठे हुए, नाच गाना हुआ, शुभकामनाएँ मिलीं और इन सारे आयोजनों को, आमंत्रण पत्र से लेकर पार्टी के मेन्यु तक मेरा भरपूर योगदान रहा. सब कुछ अच्छी तरह से हो, कोई बाकी न रह जाय, कोई कमी नहीं होनी चाहिए, इन सब की फ़िक्र में ही रहती थी, मैं और आज मेरे बच्चे की बारी आई, तो मैं अपनों से इतनी दूर हूँ कि कोई सिर पर हाथ भी नहीं रख सकता!

पहला बच्चा ननिहाल में होता है, वो तो दूर की बात है, यहाँ तो सात समुन्द्र बीच में है... कभी-कभी व्यक्ति ऐसे ख़यालों से घिर जाता है, जो उसे कमज़ोर बना देते हैं, आखिर इंसान तो इंसान ही है न? मुझे मेरे घरवालों की बहुत याद आ रही थी, आँखों में आँसू आ गये. मैंने हाथ जोड़ कर भगवान से यही प्रार्थना की कि दीनानाथ आप ही मेरे रक्षक, शुभेच्छु हैं. मेरे बच्चे को आशीर्वाद दीजिये. खिड़की में बैठी सामने सदाबहार पेड़ की हिलती डालियों को देखती रहती और सोचती रहती, ये सदाबहार पेड़ सदा ऐसे ही हरे रहते हैं. कोई भी मौसम हो... तभी वो कविता लिखी थी 'ये सदाबहार पेड़'.

क्रमशः ◆◆◆

आवाज़ दूर तक जायेगी

◆ *आत्माराम शर्मा, भारत*

हिंदी ब्लॉग के भविष्य को लेकर पढ़े-लिखों के बीच अज़ब बहस चल पड़ी है कि इसका भविष्य क्या होगा? हिंदी साहित्य के बड़े स्वनामधन्य नामों ने यह मुद्दा उछाला है और तमाम ज्ञानी इस बात का बतंगड़ बनाये हुए हैं। सभी 'अपनी ढपली अपना राग' की तर्ज पर बयानबाजी कर रहे हैं। बहरहाल हिंदवी संसार में इस तरह की बहस चलना सुखद ही कहा जायेगा कि चलो कारण कोई भी हो, भाषा के तौर पर हिंदी के भविष्य की फिक्र हुई तो भाई लोगों को। रोज़ाना कितने हिंदी ब्लॉग दर्ज हो रहे हैं और कितने बंद हो रहे हैं इसका हिसाब तो जानकर ही करेंगे, लेकिन इससे इनकार नहीं किया जा सकता कि नयी पीढ़ी के युवा हिंदी के छपे शब्दों को पढ़ने में सुख महसूस कर रहे हैं। सौभाग्य से हिंदी का यह नया पाठक वर्ग तकनीकि और कम्प्यूटर की दुनिया का अभ्यस्त है जो हिदी के अधिकांश ब्लॉगों को चाव के साथ पढ़ रहा है और अपनी सहमति-असहमति को भी दिलेरी के साथ बयान कर रहा है। दूसरी ओर हिंदी के ब्लॉगों में विषय विविधता जिस तरह विस्तार पा रही है, वह इसकी व्यापक स्वीकृति का आईना कहा जा सकता है।

भाषा के तौर पर हिंदी की दशा और दिशा के संदर्भ में **अमरेंद्र** ने अपने ब्लॉग http://amarendrahwg.blogspot.com/ पर कमाल का विश्लेषण किया है. उनका मानना है कि हिंदी संसार के लोग चर्चा करने और समस्याओं को खड़ी करने में दक्ष हैं। दूसरे शब्दों में अगर कहें तो हम समस्या उन्मूलक नहीं वरन समस्याजीवी हैं। राजनीति के लिये तो यह प्रवृति समीचीन है। मतलब अगर समस्या नहीं हो तो समाधान करने वालों की आवश्यकता ही नहीं होगी। ऐसे में उनका अस्तित्व खतरे में पड़ जायेगा। धीरे-धीरे यही प्रवृति भाषा और साहित्य में आ गयी। हिंदी साहित्य के संदर्भ में उन्होंने कुछ गौर करने लायक निष्कर्ष निकाले हैं, मसलन हिंदी में पत्रिकाओं की तादाद आवश्यकता से ज्यादा है। जहां तादाद ज्यादा है गुणवत्ता और स्तरीयता की भारी कमी है। हिंदी पढ़ने और लिखने के प्रति लोगों का रुझान तेजी से गिरा है। लिखने वाले ही आपस में पढ़ रहे हैं। शुद्ध पाठक वर्ग लगभग लुप्तप्राय हो गया है। लेखन-पठन-पाठन-सम्पादन-प्रकाशन हर जगह अनुशासन की भारी कमी है। पूरी प्रक्रिया भविष्योन्मुखी न होकर अतीत के गुणगान और वर्तमान के रोने में अटकी पड़ी है। नये प्रयोगों और शिल्प का भारी अभाव है।

विनीत कुमार ने http://taanabaana.blogspot.com 'ब्लॉगरों के खिलाफ क्यों लिखती रहती हैं मृणाल पांडे' के जरिये महत्वपूर्ण बात कही। उनका कहना था हमें पूरा भरोसा है कि इंटरनेट पर हिंदी लेखन और ब्लॉगिंग को लेकर मृणाल पांडे की जो समझ है, उसमें हम जैसे लोगों के लिखने से रत्तीभर भी बदलाव नहीं आएगा। इसकी वजह भी साफ है। एक तो ये कि वो जिस आयवरी टावर पर चढ़कर अपनी बात रख रही

RAI GRANT INSURANCE BROKERS

Business • Life • Auto • Home

ENOCH A. BEMPONG, BA (Econ)

Account Exexutive

140 Renfrew Drive, Suite 230, Markham, ON L3R 6B3

Tel: 905-475-5800 Ext. 283 • 1-800-561-6195 Ext. 283

Fax: 905-475-0447 • ebempong@raigrantinsurance.com

Cell: 905-995-3230 • www.raigrantinsurance.com

सम्पादक
यतेन्द्र वार्ष्णी

गर्भनाल

garbhanal@ymail.com

GARBHANAL

प्रवासी भारतीयों की मासिक ई-पत्रिका

आपको हिंदी बोलनी आती है? तो फिर हिंदी में ही बात करिये

आप कुछ लिखने चाहते हैं? तो फिर हिंदी में लिखिये

अपनी बोली-बानी में बात करने का मंच है गर्भनाल ई-पत्रिका, जो हर माह नियमित तौर पर आपके ईमेल बॉक्स में पहुँच जाती है. इसे पढ़ें और परिजनों, मित्रों को फॉरवर्ड करें.

GARBHANAL

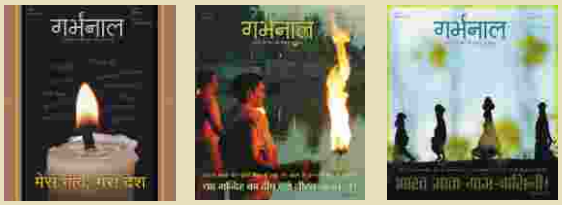

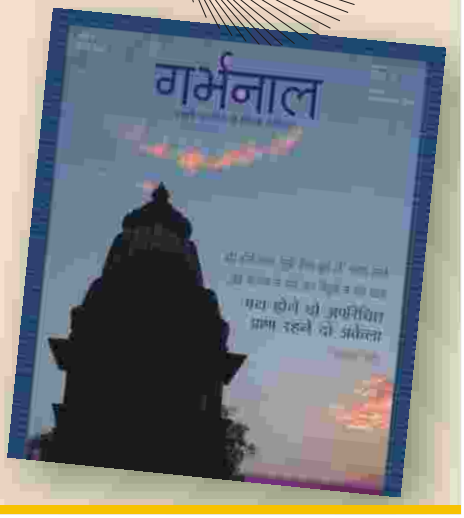

गर्भनाल के पुराने सभी अंक www.garbhanal.com पर उपलब्ध है.

हैं, उसकी पहुंच शायद हमलोगों तक नहीं है। दूसरी बात कि लिख-पढ़कर किसी की भी समझ को फिर भी दुरुस्त किया जा सकता है या फिर खुद भी दुरुस्त हुआ जा सकता है। लेकिन जहां पूरा का पूरा मामला नीयत पर आकर ठहर जाए वहां आप इस बात की बिल्कुल भी उम्मीद नहीं कर सकते कि कुछ बदलने की गुंजाइश है। मृणाल पांडे इंटरनेट और ब्लॉग पर लिखी जा रही बातों, कंटेंट और मटीरियल को कितना पढ़ती है, ये मैं नहीं जानता। मुझे नहीं पता कि न्यू मीडिया पर बात करते हुए वो जब भी कुछ लिखती हैं, तो कैंपस में चेले-चुर्गो की तरह सुनी-सुनायी बातों के आधार पर बात करनेवाले मास्टरों की तरह ही राय बना लेती हैं या खुद भी उससे गुजरती हैं। लेकिन इतना तो तय है कि अगर वो पढ़ती भी हैं तो चुपचाप वहां से होकर गुजर जाती हैं। वो इस बात की जरूरत कभी भी महसूस नहीं करतीं कि अगर लिखी गयी बातों या पोस्ट को लेकर असहमति है तो सीधे कमेंट के जरिये अपनी बात रखें। यानी मृणाल पांडे वर्चुअल स्पेस में लगातार लिखनेवाले लोगों से संवाद बनाने के बजाय उनके प्रति व्यक्तिगत राय बनाना ज्यादा पसंद करती है। उसके बाद अखबारों के संपादकीय या फिर कॉलम में उसे उंड़ेल देना ज्यादा जरूरी और फायदेमंद मानती हैं।

नमिता जोशी ने

http://blogs.navbharattimes.indiatimes.com पर हमारे वर्तमान समाज में लड़कियों की दशा की एक अलग ही तस्वीर प्रस्तुत की है 'वो फोन पर किससे बातें करती रहती है?' के जरिये। वे लिखती हैं : देख...देख...फिर से फोन पर बातें कर रही है। दिन भर बालकनी में कान पर कंधे के सहारे फोन अटका कर इधर से उधर चक्कर लगाती रहती है और हंस-हंसकर बात करती रहती है। ये थकती नहीं है? इसकी ममी कुछ नहीं कहती? पता नहीं, किससे बातें करती रहती है? अरे यार, और कौन होगा, बॉयफ्रेंड ही होगा उसका...। अच्छा? तुझे कैसे पता चला? ये भी कोई सवाल है, उसकी बॉडी लैंग्वेज से कुछ समझ नहीं आता क्या? अच्छा, और वो जो अपने डॉगी को सुबह शाम तेज-तेज कदमों से घुमाती है। पैरों से तेज तो उसकी ज़बान चलती है फोन पर, कचर-कचर...ओह नो! और वो जो शाम को ऑफिस से घर लौटते वक्त बस से उतरते ही फोन घुमाती है और घर पहुंचने से ठीक पहले फोन काट देती है, उसका क्या? बाप रे, कैसी लड़की है? कम ऑन अंकल, गिव मी अ ब्रेक! सब के सब फोन पर बात करती लड़की की बॉडी लैंग्वेज के एक्सपर्ट क्यों बन जाते हो? वैसे यही हाल मेरे जिम का भी तो है। यूं तो सब यंगस्टर्स आते हैं वहां, लेकिन भेजे में वोही कीड़ा। उस लड़की के फोन की घंटी बार-बार कौन बजाता है? फिर वो एक्सरसाइज के बीच-बीच में ब्रेक लेकर फोन पर बात करती है। पूरे जिम में हल्ला। ये किससे बातें करती है रोज? मैरिड है। फोन पर पति तो नहीं होगा। हो ही नहीं सकता जी, इतनी देर तक इसकी कचर-कचर पति क्यों सुनेगा भला? बॉयफ्रेंड ही होगा। ओह माई गॉड.... कैसी लड़की है?

बच्चे का कामयाब होना ज़रूरी है या अच्छा इंसान होना?' के मार्फत गहरे और गंभीर सवाल उठाती हैं। वे पूछती हैं : हम हमेशा अपने बच्चों में कामयाबी ही क्यों तलाशते हैं, इंसानियत क्यों नहीं, सलाहियतें क्यों नहीं, नेकियाँ क्यों नहीं, क्रिएटिविटि क्यों नहीं? यह भी विचार विचलित करता रहा कि क्यों हम अपने बच्चे को सर्वगुण सम्पन्न देखना चाहते हैं। उससे अधिक अपेक्षाएं करके क्या हम उसे उसकी उम्र से बड़ा नहीं बना रहे हैं। उसका बचपन नहीं रौंद रहे हैं। ये तो समझना ही पड़ेगा कि कच्चा मिट्टी का घड़ा अपने पानी नहीं टिका सकेगा। हम बच्चों से बड़ों जैसी उम्मीदें क्यों करते हैं?

शब्द-निधि

http://shabadnidhi.blogspot.com पर 'बच्चे का कामयाब होना ज़रूरी है या अच्छा इंसान होना?' के मार्फत गहरे और गंभीर सवाल उठाती हैं। वे पूछती हैं : हम हमेशा अपने बच्चों में कामयाबी ही क्यों तलाशते हैं, इंसानियत क्यों नहीं, सलाहियतें क्यों नहीं, नेकियाँ क्यों नहीं, क्रिएटिविटि क्यों नहीं? यह भी विचार विचलित करता रहा कि क्यों हम अपने बच्चे को सर्वगुण सम्पन्न देखना चाहते हैं। उससे अधिक अपेक्षाएं करके क्या हम उसे उसकी उम्र से बड़ा नहीं बना रहे हैं। उसका बचपन नहीं रौंद रहे हैं। ये तो समझना ही पड़ेगा कि कच्चा मिट्टी का घड़ा अपने पानी नहीं टिका सकेगा। हम बच्चों से बड़ों जैसी उम्मीदें क्यों करते हैं?

अंशुमाली रस्तोगी

http://anshumaliblospotcom.blogspot.com ने पूछा है कि 'क्यों नहीं लिखतीं महिलाएं व्यंग्य?' इस सवाल का जवाब उतना ही कठिन है जितना कि यह सवाल। उनकी कुछ स्थापना रोचक हैं, गौर करें : व्यंग्य लेखन में पुरुष का ही दबदबा क्यों बना रहता है? लेखन के जिन खांचों के भीतर रहकर महिलाएं लिखती हैं, उनमें स्त्री-विमर्श तो हर कहीं मौजूद है, परंतु उसमें व्यंग्य कहीं शामिल नहीं होता। अगर महिलाएं स्त्री-विमर्श को चलाना ही चाहती हैं तो उसे व्यंग्य के माध्यम से क्यों नहीं चलातीं? व्यंग्य को स्त्री-विमर्श में शामिल क्यों नहीं करतीं? पिटी-पिटाई लकीर पर चलने वाले स्त्री-विमर्श में केवल भाषाई उद्दंडता और पुरुष-वमन के सिवाय कहीं कुछ भी वैचारिक या गंभीर नहीं है। स्त्री-विमर्श की चिंगारी को हर वक्त भड़काए रखने के लिए उसमें देह को और जोड़ दिया जाता है, ताकि प्रगतिशील बुद्धिजीवियों की दुकानदारी मौज से चलती रही। आपको भले ही न लगे लेकिन मुझे यह देहवादयुक्त स्त्री-विमर्श हास्यास्पद ज्यादा नजर आता है। मेरा यह मानना है कि स्त्री-विमर्श पर चली रही कथित बौद्धिकता अपने आप में ही एक व्यंग्य है।

संजय बेंगाणी ने

http://www.tarakash.com/joglikhi/?p=1564 पर अत्यंत ही रोचक मुद्दा उठाया कि 'ओ रे बन्धू मत लिखियो ब्लॉग'। वे

लिखते हैं : आदमी कोई अपराध कर के बच सकता है, मगर ब्लॉग लिख कर नहीं। क्योंकि ब्लॉग लिखते समय कहाँ से लिखा गया है इसका सबूत भी साथ-साथ अंकित हो जाता है। बच कर कहाँ जाओगे बाबू? ब्लॉग छोड़ो अब तो टिप्पणी करना भी आफत मोल लेने जैसा है, लिखो कुछ, कोई उसे समझे कुछ और दन से मुकदमा ठोक दे। फिर उस घड़ी को कोसते रहो जब टिप्पणी करने को मन मचला था। आप इनकार भी नहीं कर सकते, अगला पहले ही दाँत पीस कर और ताल ठोक कर कह चुका होगा, तेरा आई.पी. मेरे पास है, बच्चू. एक समय था जब ब्लॉगिंग की महिमा के बखान कर लोगों से इसमें कदम रखने को कहते थे। बड़ा भाई-चारा है हिन्दी ब्लॉगिंग में। सब एक-दूसरे को भाई कहते हैं. मन मुटाव एक ई-मेल से दूर हो जाते या टंकी पर चढ़ अपनी नाजारगी दर्शा देते। मामला खत्म। मगर अब मामला अदालत तक पहुँचने लगा है, पहले कीचड़ उछलता था अब मुकदमे उछल रहे हैं। ऐसे में इच्छुक लोगों से यही कहूँगा ओ रे बन्धू मत लिखियो ब्लॉग.

शिवेंद्र सिंह चौहान

http://blogs.navbharattimes.indiatimes.com ने - हिंदी ही तो हमारी 'राष्ट्रभाषा' है को 'मिले सुर मेरा तुम्हारा' के जरिये नये तरीके से पड़ताल की है। वे लिखते हैं : 'मिले सुर' की रीढ़ हिंदी की न होती तो भी क्या यह इतना लोकप्रिय होता? जिस दिन नया 'मिले सुर' रिलीज हुआ, एक नामी टीवी न्यूज़ चैनल पर ऐंकर को कहते सुना, 'मुझे तीन भाषाएं आती हैं- अंग्रेजी, हिंदी और मैथिली। लेकिन जब मैं छोटा था तब 14 भाषाओं में गा लेता था। यह कमाल था 'मिले सुर मेरा तुम्हारा' का जिसने सही मायने में हर देशवासी को अलग-अलग हिस्सों की भाषा से जोड़ा।' यह संभव हुआ है हिंदी भाषा की सबको साथ रखने, सबके साथ मिल-जुलकर चलने की विशेषता की वजह से। आजकल सबसे ज्यादा लोकप्रिय टीवी सीरियलों में भी पृष्ठभूमि गुजराती हो या मराठी या फिर पजाबी, हरियाणवी, मूल भाषा हिंदी ही होती है। उदाहरण के लिए बालिका वधू, केसरिया बालम आवो म्हारे देस, बैरी पिया, अगले जनम मोहे बिटिया ही कीजो, न आना इस देस लाडो और तारक मेहता का उल्टा चश्मा। इन सब सीरियलों में दाल हिंदी की ही है बस छौंक स्थानीय भाषा की लगा दी गई है।

'मुक्ति की गारंटी है जनोन्मुखी विज्ञान' जैसे गंभीर प्रश्न को

जगदीश्वर चतुर्वेदी

http://www.pravakta.com ने उठाया है। वे लिखते हैं : अंधविश्वास से लड़ने के लिए विज्ञान के बुनियादी क्षेत्रों में अनुसंधान और विज्ञानसम्मत चेतना के निर्माण पर जोर दिया जाना चाहिए। कुछ विज्ञान संगठन हैं जो सचमुच में अंधविश्वास से लड़ना चाहते हैं किंतु इसके लिए ये लोग लोकप्रिय विज्ञान का सहारा लेते हैं। प्रसिद्ध वैज्ञानिक जे. बरनाल के शब्दों में 'लोकप्रिय विज्ञान वास्तविक विज्ञान से उतनी ही दूर की चीज है जितनी लोकप्रिय संगीत, शास्त्रीय संगीत से है।' आमतौर पर यह देखा जाता है वैज्ञानिक खबरों को हिंदी का कोई अखबार छापता ही नहीं या छापता है तो छपी हुई चीजें आती हैं। वे पूरी तरह टुकड़ों-टुकड़ों में होती हैं। लोकप्रिय अखबार किसी खोज के बारे में सिर्फ इसलिए छापते हैं क्योंकि वह चौंकाने वाली लगती है और हमारे स्वीकृत दृष्टिकोण में कुछ उलटफेर करती है। अधिक गंभीर अखबार भी यथार्थतः इससे बेहतर कुछ नहीं करते। हमें विज्ञान और लोकप्रिय विचारों के बीच आदान-प्रदान पर जोर देना होगा। आज विज्ञान और वैज्ञानिक अलगाव की स्थिति में हैं। अलगाव का आलम यह है कि वैज्ञानिक दूसरी दुनिया का हो गया है।

हिंदी ही तो हमारी 'राष्ट्रभाषा' है की 'मिले सुर मेरा तुम्हारा' के जरिये नये तरीके से पड़ताल की है। वे लिखते हैं : 'मिले सुर' की रीढ़ हिंदी की न होती तो भी क्या यह इतना लोकप्रिय होता? जिस दिन नया 'मिले सुर' रिलीज हुआ, एक नामी टीवी न्यूज़ चैनल पर ऐंकर को कहते सुना, 'मुझे तीन भाषाएं आती हैं- अंग्रेजी, हिंदी और मैथिली।

अपनी भाषा : घोषणा करो, भूल जाओ!

समन्वय नंद ने

http://www.pravakta.com/?p=6512 'अंग्रेजीदां नौकरशाही है भारतीय भाषाओं की दुश्मन' के जरिये हमारे समाज के असली मालिकों के सोच को उजागर किया है। वे लिखते हैं : राज्य में जितने सरकारी कार्यक्रम होते हैं, उनकी भाषा अंग्रेजी होती है। राजनेता तो ओडिया भाषा में कुछ बोल भी देते हैं, लेकिन भारतीय प्रशासनिक सेवा, भारतीय पुलिस सेवा या फिर ओडिशा प्रशासनिक सेवा के अधिकारी यानी पूरी वरिष्ठ नौकरशाही अंग्रेजीदां है। कार्यक्रम जब ओडिशा में हो रहा हो, वक्ता जब ओडिया भाषा जानता हो और श्रोता भी ओडिया भाषी हों, तो फिर अंग्रेजी में भाषण क्यों दिया जाता है, यह समझ से परे है। सिर्फ कार्यक्रम ही क्यों, पूरी सरकार अंग्रेजी के बैसाखी पर चलती है। महाराष्ट्र नवनिर्माण सेना के नेता राज ठाकरे मराठी हित की बात करते हैं और हिन्दी का विरोध करते हैं। उन्हें मुंबई की सड़कों पर हिन्दी में लिखे साइनबोर्ड नहीं चाहिए, लेकिन अगर विदेशी भाषा अंग्रेजी में साइन बोर्ड लिखा हो, तो उन्हें उसमें कोई आपत्ति नहीं है। अंग्रेजी पब्लिक स्कूलों में मराठी नहीं पढ़ाई जाती, इस पर ठाकरे को कुछ नहीं कहना है।

और अंत में **संध्या गुप्ता**

http://guptasandhya.blogspot.com की कविता आपको पढ़वाने से अपने को रोक नहीं पा रहा हूँ : कोई मकान अधूरा क्यों रह जाता है! / सलीब की तरह टँगा है / यह सवाल मेरे मन में / अधूरे मकान को देख कर / मुझे पिता की याद आती है / उनकी अधूरी इच्छायें और कलाकृतियाँ / याद आती हैं / देख कर कोई अधूरा मकान / उम्र के आखिरी पड़ाव में / एक स्त्री के आँचल में / एक बेबस आदमी का / बच्चे की तरह फफकना याद आता है / अतीत में आधी-आधी रात को जग कर / कुछ हिसाब-किताब करते / कुछ लिखते / एक ईमानदार आदमी का चेहरा सन्नाटे में / पीछा करता है / एक अकेले और थके हुए आदमी की पदचाप / सुनाई देती है सपने में / कोई मकान अधूरा क्यों रह जाता है!! ◆◆◆

BEST WAY CARPET & RUGS INC.

$50.00 Off All wall to wall Carpet with purchase up to 300 sq. ft.
10% Off all Area Rugs

Free delivery under pad Installation

• Residential • Commercial • Industrial • Motels & Restaurants

Free Shop at Home Service Call: (416) 748-6248

• Broadloom • Area Rugs • Runners • Vinyl & Hardwood • Blinds & Venetian
Custom Rugs • All kind of Vacuums

Interest Free 6 months No Payment OAC

7003, Steeles Ave. Unit 8
Etobicoke
ON M9W OA2
Ph: 416-748-6248
Fax: 416-748-6249

1 Select Ave, Unit 1
Scarborough
ON M1V 5J3
Ph: 416-321-6248
Fax: 416-321-0929

कहानी

उसके हिस्से का पुरुष

पुष्पा सक्सेना, अमेरिका

सुप्रिया आई है... गूँज बनकर बात पूरे आफिस में फैल गई थी। सभी उसे देखने, उससे बात करने को उत्सुक थे। अधिकांश के हृदय में भारी उत्कंठा थी- देखें उसकी प्रतिक्रिया क्या है? पत्नी की तरह ढाढ़े मारके रोएगी, प्रेमिका की तरह रूमाल में सिसकी पोंछेगी या स्तब्ध रह जाएगी। सुप्रिया और मानस का प्रेम खुली पुस्तक की तरह था। अपने सम्बन्धों को न उन्होंने कोई नाम दिया न छिपाया। जिसने जैसा चाहा सोचा, अपनी दृष्टि से देखा और उनके अनाम रिश्ते को अपना नाम दे डाला। दोनों की इस सबसे निर्लिप्तता, सबको अधिक कष्ट देती थी। एक पुत्र के पिता मानस का सुप्रिया से प्रेम सबके आक्रोश का कारण था।

निहायत अन्तर्मुखी मानस के विषय में लोग बहुत कम जानते थे। वही मानस सुप्रिया के साथ इतना घनिष्ठ कैसे हो गया, सबके आश्चर्य का विषय था। कार्यालय का पुस्तकालय मानस का दायित्व था। बच्चे की तरह इसे उसने सहेजा-संवारा था। अपनी मेहनत और मेधा से पुस्तकालय में कम्प्यूटरी सुविधाएँ उसने जिस शीघ्रता से उपलब्ध कराई कि सब विस्मित हो देखते रह गए थे। सुप्रिया के आने के पूर्व मानस का अधिकांश समय पुस्तकालय में ही बीतता था।

अस्पताल से मानस का शव उसके घर ले जाया गया था। कार्यालय के बहुत-से लोग मातमपुर्सी को पहुंच चुके थे। गाड़ी से मानस का नश्वर शरीर उतारा जा रहा था। पत्नी गंगा स्तब्ध देख रही थी मानो वह त्रासदी किसी और के साथ घटी थी। बेटे को किसी पड़ोसी के घर भेज दिया गया था। घर में मानस के परिवारजनों के पते खोजने के लिए डायरी की खोज हो रही थी। मिसेज भल्ला को मानस के कागज, फाइलें छूते देख गंगा ने अपरिचित आवाज में कहा था- वह नाराज होंगे, उनकी कोई चीज छूना मना है। क्या चाहिए आपको?

किसी ने समझाना चाहा था- घरवालों को खबर की जानी है, उनके पते चाहिए, वही खोज रहे हैं। आप परेशान न हों, हम उनकी डायरी देख रहे हैं।

नहीं, नहीं, वो हम पर नाराज होंगे, उनकी डायरी नही छूनी है किसी को। गंगा के स्वर में मानो आतंक था।

गीता जी ने फिर प्रयास किया था- ठीक है, हमें डायरी नहीं चाहिए, पर उनके परिवारजनों का पता तो बता दीजिए, उन्हें बुलाना जरूरी है न।

मुन्ना, तुम्हारे पापा का घर कहाँ है? उनका पता कहाँ रखा है, जानते हो?

पापा का घर कहीं नहीं है, माँ कहती है, पापा तो नाना के घर रहते थे न। नन्हें बालक के उत्तर से कुछ आशा जागी थी।

हाँ-हाँ मुन्ना, अपने नाना के घर का पता जानते हो? कहाँ रहते हैं नानाजी? चंद्रनाथ जी आगे बढ़ आए थे।

कल नाना की चिट्ठी आई है, हमें ढेर-सी चीजें लाएँगे नाना। दिखाऊं उनकी चिट्ठी? कुछ ही पलों में घर से नाना का पत्र ले आया था मुन्ना। अपने लिए लाई जाने वाली सामग्री की लम्बी लिस्ट

अस्पताल से मानस का शव उसके घर ले जाया गया था। कार्यालय के बहुत-से लोग मातमपुर्सी को पहुंच चुके थे। गाड़ी से मानस का नश्वर शरीर उतारा जा रहा था। पत्नी गंगा स्तब्ध देख रही थी मानो वह त्रासदी किसी और के साथ घटी थी। बेटे को किसी पड़ोसी के घर भेज दिया गया था। घर में मानस के परिवारजनों के पते खोजने के लिए डायरी की खोज हो रही थी।

किसी को नहीं बुलाना है, कोई नहीं है उनका। गंगा जैसे अपने आप में नहीं थी।

देखिए, आप इस समय दुख में हमारी बात समझ नहीं पा रही हैं। आपका बेटा अभी बहुत छोटा है। इस मौके पर उनके परिवार से किसी का होना बहुत जरूरी है। नागेश्वरजी ने गंगा को समझाना चाहा।

'कहा न उनका कोई नहीं है।' गंगा अडिग थी। आफिस के लोग इस स्थिति के लिए कतई तैयार नहीं थे। शायद अतिशय दुख ने गंगा को विक्षिप्त-सा कर दिया था। हार कर मानस के सात वर्षीय पुत्र से पूछा गया था-

दिखाता, नन्हा बालक कितना उत्साहित था! लिफाफे पर नाना का पता, गांव सब लिखा हुआ था।

थोड़ी ही देर बाद मानस के श्वसुर को उसकी एक्सीडेंट में मृत्यु की सूचना का तार भेजा जा चुका था। उतनी दूर से अंतिम संस्कार के समय तक उनका पहुंच पाना कठिन था। निर्णय गंगा ने ही लिया था- जो सब बंधन तोड़ गया, उसके लिए किसी की प्रतीक्षा क्यों?

वस्तुस्थिति से सर्वथा निरपेक्ष गंगा न रोई न चिल्लाई, शायद गहरे सदमे से उसे उबारने के लिए किसी ने डॉक्टर बुला लिया था। एक भी आँसू नहीं

गिराया है डॉक्टर, गहरा आघात पहुंचा है इन्हें। एक पड़ोसिन ने कहना चाहा था।

कुछ नहीं होगा मुझे डॉक्टर, बहुत प्यार किया है जिंदगी ने मुझसे। शांत स्वर में अपनी बात कह, गंगा शून्य में निहारती रह गई थी। निरुपाय डॉक्टर चले गए थे।

पड़ोस की स्त्रियाँ रोने का उपक्रम करती रहीं, पर गंगा निर्विकार बैठी मानस की अंतिम क्रियाएँ सम्पन्न होती देखती रही। लोग फुसफुसा रहे थे- उम्र ही क्या थी बेचारी की! कैसे काटेगी पहाड़-सी जिंदगी! बेटा तो अभी नादान है!

कुछ दबी-दबी बातें उभर रही थीं-कौन-सा सुख जाना है! कच्ची उम्र से ही सौत का दुख भोग रही है।

मानस का अंतिम संस्कार कौन करेगा? क्या नियम-विधान है? अचानक मानस के जाति-बंधु और कुछ परिचित वहाँ से खिसक लिए थे। जो व्यक्ति उन्हें बुलाने गया, उसे अप्रत्याशित उत्तर मिला था, मानस जाति से बहिष्कृत है, हम उसके दाह-संस्कार में सम्मिलित नहीं हो सकते।

पर इस समय तो सारे भेद-भाव भुलाकर आपको हमारी मदद करनी चाहिए।

तुम हमारे आचार-विचार नहीं जानते, इसलिए ऐसा कह कहते हो। हमें अपने बच्चों का भविष्य देखना है। हम बिरादरी से बाहर की बात नहीं करेंगे। हमें क्षमा करो भइया! हाथ जोड़ उन्होंने द्वार बन्द कर लिए थे।

अन्ततः आफिस के लोगों ने नन्हे बेटे का हाथ छुआ, मानस के शरीर को अग्नि को समर्पित कर दिया था।

हाय रे नन्ही-सी जान को ये दिन भी देखना था! स्त्रियाँ संवेदना जता रही थीं। पर गंगा तो प्रस्तर-प्रतिमा बन गई थी।

दो दिन बाद पहुँचे वृद्ध पिता को देख सब सहम गए थे- बुढ़ापा खराब हो गया बेचारे का!

बेटी गंगा की ओर ताकते पिता के चेहरे की झुर्रियाँ और गहरी हो गई थीं। हे भगवान्, क्या सोचा क्या हुआ!

चिन्ता न करें, आपकी बेटी को आफिस में नौकरी मिल जाएगी।

हम सब यहाँ हैं, हम आपकी बेटी की पूरी देखरेख करेंगे। लोग वृद्ध पिता को सांत्वना दे रहे थे।

मानस के विभागाध्यक्ष ने हर प्रकार की सहायता का आश्वासन दिया था। मुंह नीचा किए वृद्ध सबकी सुनते रहे! कभी-कभी अश्रुपूर्ण नयन अंगोछे से पोंछ नाती को देख रो उठते। नाना उसके लिए कोई सामान नहीं लाए थे। लम्बी रेलगाड़ी की बात वह मित्रों को भी बता चुका था।

देखने में अनिन्द्य सुंदरी गंगा का पढ़ाई में मन कभी नहीं लगा था। किसी तरह दसवीं कक्षा उत्तीर्ण कर वह घर बैठ गई थी। मानस से जब उन्होने गंगा के साथ उसके विवाह की बात की थी तो उसका मुख विवर्ण हो उठा था। पितृ-तुल्य पालक की आँखों में निराशा-आशंका गहराती देख उसने सहज-सधे स्वर में कहा था- आप जो आदेश दें, मुझे स्वीकार होगा।

नाना, हमें यहाँ अच्छा नहीं लगता, हम तुम्हारे साथ चलेंगे। ये लोग पापा को ले गए, नाना!

हाँ बेटा, हम वापिस चलेंगे। एक उसाँस छोड़ वृद्ध नाना मौन हो गए थे। नेत्रों के समक्ष चलचित्र सदृश रीलें घूम रही थीं।

गांव के विद्यालय के अध्यापक, पंडित जी के आकस्मिक निधन पर बेसहारा मानस को चार वर्ष की आयु से उन्होंने पाला था। सरस्वती का जितना ही अगाध भंडार पंडित जी के पास था, लक्ष्मी उतनी ही उनसे विमुख रहीं। आसपास के बच्चों को जोड़-बटोर के पंडित जी उन्हें पढ़ाते थे, वर्ना उस गाँव में शिक्षा का उतना सम्मान कहाँ था! आज तो पंडित जी के पढ़ाए बच्चों में से कुछ उच्च अधिकारी भी बन चुके हैं। मानस को जन्म देते ही पंडितानी स्वर्ग सिधार गई थीं। उस दारिद्रय में मानस पंडित जी का रत्न था। शांत, बुद्धि-प्रदीप्त चेहरा, कंचन-सा रंग सबका मन मोह लेता था। पंडित जी के अचानक निधन पर मानस के लालन-पोषण की समस्या उठ खड़ी हुई थी। पंडित जी के दूर-दराज के रिश्तेदारों में भी मानस का दायित्व उठाने वाला कोई नहीं था। उन्ही की उंगली पकड़, मानस उनके घर आ गया था। कुछेक जाति-धर्म के ठेकेदारों ने नाक-भौं सिकोड़ीं, पर मानस का दायित्व लेने की पहल किसी ने नहीं की थी। उनकी स्नेह-छाया में मानस बड़ा होता गया।

बचपन से ही मानस सबसे अलग अन्तर्मुखी प्रकृति का था। उसकी प्रखर बुद्धि और शालीन व्यवहार ने उन्हें मुग्ध किया था। एकमात्र पुत्री गंगा के लिए उससे उपयुक्त वर और कौन होगा! बाधा उनकी जाति थी। मानस उच्चकुलीन ब्राह्मण और वे स्वयं उसके पाँव पूजने वाले यजमान। इस विराट विश्व में मानस नितान्त अकेला था, अतः विवाह के समय जाति-भेद को उठाने वाला कौन होगा? पर उनकी धारणा कितनी गलत सिद्ध हुई थी! सुपात्र मानस को अपनी कन्या देने वाले कई परिवार सामने आ गए थे। उनकी पुत्री गंगा से मानस के विवाह की बात का कड़ा विरोध किया गया था। सबकी चुनौतियों के विरोध में वह दहाड़ उठे थे-

कहाँ गया था ये उच्च कुल का अभिमान जब उसे पालने कोई आगे नहीं आया था? आज उस पर अधिकार जमाते लाज नहीं आती? उनकी दहाड़ पर लोग चुप भले ही हो गए, पर दंड मानस को भुगतना पड़ा था, ये बात बहुत दिनों बाद उन्हें ज्ञात हो सकी थी। उच्चकुलीन परिवारों ने मानस को जाति से बहिष्कृत कर दिया था।

देखने में अनिन्द्य सुंदरी गंगा का पढ़ाई में मन कभी नहीं लगा था। किसी तरह दसवीं कक्षा उत्तीर्ण कर वह घर बैठ गई थी। मानस से जब उन्होने गंगा के साथ उसके विवाह की बात की थी तो उसका मुख विवर्ण हो उठा था। पितृ-तुल्य पालक की आँखों में निराशा-आशंका गहराती देख उसने सहज-सधे स्वर में कहा था- आप जो आदेश दें, मुझे स्वीकार होगा।

चाह कर भी वे पूछने का साहस नहीं कर सके थे, तुम्हारा अपना मन क्या कहता है, मानस? ये स्वीकृति सिर्फ मेरी आज्ञा का पालन भर है न? क्या वे उसकी बात सहज ही मान गए थे? सब कुछ जानकर भी उन्होंने अपने को धोखा दिया था। गंगा जैसी अति सामान्य बुद्धि वाली लड़की भला मानस की प्रखरता झेलने योग्य थी! संदेहों-अपवादों को झुठला उन्होंने दोनों का धूमधाम से विवाह किया था।

उन्हें लगता, विवाह के बाद मानस और ज्यादा गम्भीर होता जा रहा था। एक दिन गंगा से पूछा भी था- क्या बात है बेटी, मानस बहुत चुपचाप रहता है?

वह तो हमेशा से ऐसे ही हैं बाबूजी, आपको व्यर्थ भ्रम हो रहा है, कहती गंगा हँस दी थी।

पता नहीं वह पगली लड़की मानस की बातें समझ भी पाती है? इसी कारण वे मानस के प्रति और अधिक उदार और स्नेही हो उठे थे। मानस के अकेलेपन का रहस्य भी उन पर ही खुला था।

दिनेश के विवाह में तुम नहीं गए, मानस?

नहीं।

क्यों, वह तो तुम्हारा घनिष्ठ मित्र है।

जी।

फिर?

मैं आमंत्रित नहीं हूँ, बाबूजी।

क्यों? उनके स्वर में विस्मय भर आया था।

दिनेश के घरवालों को मेरी उपस्थिति प्रिय नहीं है।

तभी उन्हें याद आया था दिनेश की भतीजी के विवाह का प्रस्ताव भी तो मानस के लिए आया था। इसके बाद धीमे-धीमे उन्हें पता लगता गया, मानस के मित्र भले ही उसे सच्चे हृदय से स्वीकारें, उनके रूढ़िवादी परिवार उसे नीची दृष्टि से देखते हैं। उनका कुल उनकी तुलना में नीचा जो था। मानस की गम्भीरता उन्हें व्यथित करती, पर वे निरुपाय थे। काश गंगा मानस की पूर्णता बन पाती! उनके कार्य का प्रतिशोध लोगों ने भी मानस से लिया था। उस रूढ़िवादी समाज में मानस को कितना अपमानित होना पड़ा होगा, इस पर उन्होंने कभी ध्यान ही नहीं दिया। बेहद उदार, निर्लोभी, भोले मानस की लालची के रूप में खिल्ली तक उड़ाई जाती थी। रुपयों के लालच में उसने गंगा से विवाह किया - प्राय: लोग व्यंग्य करते रहते। इन सबके ऊपर गंगा से उसे कौन-सा मानसिक संतोष मिल पाता होगा? पिता की दुलारी, सिरचढ़ी गंगा को तो बस अच्छे वस्त्र, आभूषण और भोजन से ही मतलब रहता था। युवती गंगा का बचपना कभी-कभी उन्हें तक विचलित कर जाता था।

जब मानस एक पुत्र का पिता बना तो उसके शांत निर्विकार चेहरे को देख वृद्ध सोच में पड़ गए थे। उन आनंद के क्षणों में वैसी उदासीनता?

क्या पुत्र के प्रति आने वाले दायित्व चिन्तित कर रहे हैं, मानस? वृद्ध ने विनोद करना चाहा था।

आपके रहते कैसी चिन्ता, बाबूजी?

क्या नाम दोगे बेटे को?

जो आपको रुचिकर हो।

हाँ बाबूजी, इसको नाम तो आपको ही देना होगा। गंगा मचल उठी थी।

बेहद उदार, निर्लोभी, भोले मानस की लालची के रूप में खिल्ली तक उड़ाई जाती थी। रुपयों के लालच में उसने गंगा से विवाह किया – प्रायः लोग व्यंग्य करते रहते। इन सबके ऊपर गंगा से उसे कौन–सा मानसिक संतोष मिल पाता होगा? पिता की दुलारी, सिरचढ़ी गंगा को तो बस अच्छे वस्त्र, आभूषण और भोजन से ही मतलब रहता था। युवती गंगा का बचपना कभी–कभी उन्हें तक विचलित कर जाता था।

मानस की आहत दृष्टि पहिचान वृद्ध ने फिर कहा था- कोई नाम तो सोचा होगा, मानस?

मानस के उत्तर के पूर्व ही गंगा बोल पड़ी, न, नाम आप ही दें बाबूजी।

विवेकानंद कैसा रहेगा मानस?

उतना लंबा नाम कैसे पुकारूंगी, विवेक ही काफ़ी नहीं है, बाबूजी।

मानस के उत्तर की गंगा ने तनिक भी प्रतीक्षा कहाँ की थी!

क्यों मानस? उनकी प्रश्नवाचक दृष्टि मानस पर निबद्ध थी।

ठीक है।

पुत्र के नाम के प्रति इतनी तटस्थता क्यों, मानस? तुम्हारी इच्छा-अनिच्छा इस विषय में महत्वपूर्ण है।

मेरा सब कुछ तो आपका दिया है, बाबूजी! मैं अकिंचन किसी को दे ही क्या सकता हूँ-वो भी नाम जैसी चीज?

कैसी बातें करते हो मानस, मेरा सब कुछ तुम्हारा ही तो है।

जी- संक्षिप्त उत्तर के साथ शायद एक अवसादपूर्ण मुस्कान ओठों पर तिर आई थी।

उस दिन भी वे उसकी बात का मर्म कहाँ समझ सके थे!

तो विवेक ही तय रहा।

मेरा विवेक! गंगा ने नवजात शिशु का मुख चूम लिया था।

नन्हें-से विवेक को गोद में उठाए, उसका प्यार-दुलार करते वृद्ध जी उठे। दिन-रात नाती के प्यार-दुलार में डूबे वे और माँ गंगा, मानस को तो भुला ही बैठे थे। मानस ने जब उन्हें अपनी दूर शहर में नियुक्ति की सूचना दी तो वे चौंक उठे थे...

क्या तुम इतनी दूर जाना चाहते हो, लेकिन क्यों? क्या यहाँ कोई कमी है, बेटा?

कमी की बात का तो प्रश्न ही नही उठता, पर संसार का अनुभव पाने के लिए घर के बाहर भी तो जाना चाहिए, बाबूजी!

भगवान का दिया सब कुछ तो है, जितना चाहो घूमो-फिरो, पर तुम्हारी ये घर छोड़कर नौकरी वाली बात मेरी समझ में नहीं आती, मानस!

घर तो आपके पास ही रहेगा, गंगा और विवेक को आपकी आज्ञा पर ही ले जाऊंगा, बाबूजी! मानस उनके भय को पहिचानता था।

आश्वस्ति की श्वांस ले उन्होंने नाती को सीने से लगा लिया था। ठीक है, अगर तुमने जाने का निर्णय ले ही लिया है, तो प्रभु तुम्हारी रक्षा करें। गंगा को बताया है?

गंगा को आप ही समझा लें, बाबूजी! आशीर्वाद दीजिए किसी योग्य बन सकूँ। पितृ-तुल्य श्वसुर की चरण-धूलि लेते मानस का भी स्वर रुद्ध हो उठा था।

मानस का जाना गंगा को अच्छा नहीं लगा था, पर पिता का लाड़-दुलार और सुख-सुविधाएँ एकाएक छोड़ पाना भी सम्भव नहीं था। मानस की सीमित आय में उन सुख-सुविधाओं की कल्पना भी व्यर्थ थी। मानस को न जाने देने की चेष्टा में उसने मनुहार भी की थी, पर मानस ने अपना निर्णय दृढ़ स्वर में सुना दिया था-

बहुत दिन बाबूजी पर बोझ बनकर रह लिया, अब अपना और अपने परिवार का दायित्व उठाना मेरा कर्तव्य है, गंगा! मेरा सब कुछ तुम्हारा है, पर इसी सीमित आय में काम चलाना होगा। बाबूजी से और अधिक ले पाना अब मेरे लिए संभव नहीं है, गंगा!

क्या कह रहे हो, बाबूजी क्या पराए हैं? हमारे सिवाय उनका और है ही कौन? गंगा के

बड़े-बड़े नयन अश्रुपूर्ण थे।

उन्होंने जो दिया है उससे उऋण हो पाना तो असम्भव है, पर उनकी पुत्री का भरण-पोषण करने योग्य बन सकूँ, यह देख वह प्रसन्न ही होंगे।

छिः, ऐसा कहकर तो तुम बाबूजी का अपमान कर रहे हो। तुम जितना वेतन घर लाओगे, उतनी तो तुम्हें बाबूजी से पॉकेट मनी मिलती है। उनका सब कुछ हमारा ही तो है न ?

हमेशा हमने बाबूजी से लिया ही तो है, गंगा ! कभी मुझसे भी कुछ लेकर देखो, बहुत सुख पाओगी। मेरी सीमित आय पर तुम्हारा एकमात्र अधिकार होगा। मंद स्मित तैर आया था मानस के अधरों पर।

तुम्हारी बातें मेरी समझ के बाहर हैं। यहाँ रहकर भी तो बाबूजी का हाथ बँटा सकते हो। क्या कष्ट है यहाँ, जो बाहर भाग रहे हो ? गंगा झुँझला उठी थी।

बाबूजी वट-वृक्ष हैं, उनकी छाया बहुत शीतल है, पर उसमें मैं पनप नहीं सकता, गंगा ! काश, तुम मेरी बात समझ पातीं ! हल्की-सी उसाँस छोड़ी थी मानस ने।

वृद्ध के माथे की लकीरें गहरी हो उठीं- सचमुच वह पगली कहाँ समझी थी मानस की बात। बेटी ही को क्यों अपराधी ठहराएँ - वे स्वयं भी क्या अपने मानस की थाह पा सके थे ?

आज मानस की डायरी उसके विभागाध्यक्ष दे गए हैं। उसकी अलमारी खोली गई थी, व्यक्तिगत पत्रों के साथ यह डायरी भी मिली थी। अच्छा होता डायरी उन्हें न दी जाती। डायरी हाथ में आने पर उसे न खोलना उन्हें असम्भव लगा था। पहले पृष्ठ से अन्त तक वे पढ़ते गए थे..

घर से इतनी दूर आना एक अनुभव है। जब से होश सँभाला, अपने को पराश्रित पाया है। दूसरों की दया पर पला-बढ़ा, जिसकी अपनी आशा-आकांक्षाएँ सब उधार की हैं। बाबूजी के अपार स्नेह में भी दया की करुणा नजर आती है। और मेरी पत्नी गंगा ? उसका जीवन सहज-स्वाभाविक नदी-सा है- पिता और पति की कगारों के बीच निश्छल बहती धारा। पिता की उदारता मुझे देकर वह परितृप्त है। पति नामधारी मानस-जिसका सब कुछ उसके पिता के उपकारों तले दबा है। अपनी हर आवश्यकता के लिए गंगा पिता पर निर्भर है। पिता की दया पर आश्रित, मानस भी कभी उसकी आवश्यकता पूर्ण कर सकता है शायद वह यह बात सोच भी नहीं सकती।

अन्यमनस्क वृद्ध पृष्ठ पलटते गए थे। एक पृष्ठ पर दृष्टि गड़ गई थी-

आज उस नई लड़की ने सहायक लाइब्रेरियन के रूप में आफिस ज्वाइन किया है। कितनी डरी-डरी-सी लग रही थी ! मिश्रा बता रहा था, कलकत्ता आफिस के मिस्टर दयाल की बेटी है। हार्ट अटैक में पिता की अचानक मृत्यु हो जाने के कारण उसे ये नौकरी दी गई है।

मैंने इसके पहले कहीं काम नहीं किया है, आपकी गाइडेंस चाहिए। मैं जल्दी ही सब सीख लूंगी - आत्मविश्वास से पूर्ण दृष्टि मुझ पर निबद्ध थी।

हाँ... कोई प्रॉब्लम हो तो बताइएगा। यहाँ का काम बहुत आसान है। मन लगाकर काम करेंगी तो कुछ भी कठिन नहीं लगेगा।

थैक्यू सर ! आँखों में जैसे दीप जल उठे थे।

दूसरे दिन मानो उसकी मैं प्रतीक्षा-सी कर रहा था। उसके आने से कमरा कुछ ज्यादा ही आलोकित हो उठा था।

आप किसी अच्छी जगह रहने के लिए एक कमरा दिला सकते हैं ? मेरी मेज के पास खड़ी सुप्रिया कुछ परेशान-सी थी।

कमरा ? क्यों क्या यहाँ कोई परिचित नहीं है ?

नहीं। माँ अक्सर बीमार रहती हैं, कलकत्ते में मौसी उन्हें सम्हाल लेती हैं। कलकत्ते में भाई की पढ़ाई चल रही है, उसे तो वहाँ रहना ही होगा। मुझ अकेली के लिए बस एक कमरा ही काफ़ी होगा। उदास मुस्कान बिखर आई थी सुप्रिया के शुष्क होंठों पर।

ठीक है, देखकर बताऊंगा। अभी कहाँ रह रही हैं ?

बर्किंग वीमेंस होस्टेल में।

फिर वहाँ क्या कष्ट है ?

आफिस से हॉस्टेल बहुत दूर पड़ता है न सर, आने-जाने में दो घंटे व्यर्थ चले जाते हैं। पढ़ाई के लिए समय ही नहीं मिल पाता।

क्या पढ़ रही हैं आप ?

हिन्दी साहित्य में शोध-कार्य कर रही हूँ।

विषय क्या रखा है ?

स्वातंत्र्योत्तर उपन्यासों में प्रेम-तत्त्व - विषय बताते सुप्रिया का मुख शायद आरक्त हो उठा था।

अच्छा हो शोध-कार्य के पूर्व पत्राचार पाठ्यक्रम की सहायता से लाइब्रेरी-साइंस की परीक्षा पास कर लें। ये डिग्री आपको ज्यादा उपयोगी रहेगी। न जाने क्यों स्वर रुद्ध हो उठा था।

जी... मैंने कभी नहीं सोचा था, किसी कार्यालय में नौकरी करूँगी। मैं लेक्चरर बनना चाहती थी, सर ! सुप्रिया का स्वर उदास था।

जो चाहा जाए, हमेशा वह पूरा तो नहीं होता, मिस सुप्रिया ! स्वर में तनिक आक्रोश झलक आया था।

एक बात कहूँ सर, आप कभी-कभी बहुत आक्रोश में लगते हैं जैसे किसी से नाराज़ हों !

मैं अपने आप से नाराज़ हूँ, सुप्रिया जी, आप मेरी चिन्ता न करें।

आप मुझसे इतने बड़े हैं, सर फिर मुझे 'जी' कहकर क्यों सम्बोधित करते हैं ?

ये आफिस है सुप्रिया जी, यहाँ रिश्ते नहीं जोड़े जाते। पारस्परिक सौहार्द्र बना रहे, काफी है। कुछ दिनों में यह सत्य जान जाएँगी।

अपमान से सुप्रिया का मुंह कुम्हला गया था। क्यों, कभी-कभी मैं इतना कठोर क्यों हो उठता हूँ ?

वृद्ध पिता से मिलने कोई सज्जन आए है- नाती विवेक सूचित कर खेलने भाग गया था। सावधानी से डायरी बिस्तर के नीचे रख वे बाहर चले गए थे।

मानस के सहकर्मी शोक-संवेदना प्रकट कर चले गए थे। मानस की सभी प्रशंसा कर रहे थे, उसके बिना लाइब्रेरी कितनी अपरिचित लगेगी। सबको विदा दे वृद्ध ने डायरी के पृष्ठ पलटे थे...

दो दिनों से सुप्रिया नहीं आ रही है। आफिस की सहायिका कलादेवी ने बताया था... सुप्रिया दीदी तेज बुखार में पड़ी हैं। बेचारी का यहाँ कोई नहीं है। कल तो दवा हमसे मंगाई थी।

कहाँ रहती हैं, मिस पाठक ?

उसी संध्या अपने सामने अचानक मुझे देख सुप्रिया के ज्वर से बोझिल नयनचौंक गए थे... सर... आप... ?

कैसी हैं, सुप्रिया जी ? कलादेवी ने बताया आप अस्वस्थ हैं।

बस यूँ ही... शायद मौसमी बुखार है।

मेरी कही बात उसके लिए वेद-वाक्य बन जाती है। यह तो मेरे लिए सर्वथा नवीन अनुभव है, कोई मुझसे इतनी प्रत्याशा रखे! मेरी छाया तले साँस ले! मैं अकिंचन भला किसी को क्या दे सकता हूँ? सुप्रिया है कि हर पल एहसास कराती रहती है कि उसके जीवन के लिए मैं कितना महत्त्वपूर्ण हूँ। अच्छा लगता है यह एहसास... कितनी संतुष्टि, कितनी तृप्ति- क्या इसी को पुरुष की अहं-तुष्टि कहते हैं?

माथे पर मेरा हाथ अचानक चला गया था। न जाने कैसी ममता-सी उमड़ आयी थी उस असहाय, भीरू-सी लड़की के लिए।

खाने-पीने का क्या इंतजाम है? लगता है भूख-हड़ताल चल रही है। आफिस में खबर क्यों नहीं भेजी, सुप्रिया? स्वर में ढेर-सा स्नेह उमड़ आया था।

सुप्रिया की आँखें भर आई थीं... जी... से अधिक वह कुछ बोल कहाँ सकी थी! माथे पर स्नेहपूर्ण हाथ धर मैं मौन सांत्वना ही तो दे सका था।

...पूरे आठ दिनों बाद आज सुप्रिया का ज्वर छूटा है। इस बीमारी में तो वह एक नन्हीं आज्ञाकारी बालिका भर रह गई थी। दवाई देने से पथ्य देने तक का दायित्व मेरा ही था। किस कदर निर्भर हो गई है सुप्रिया मुझ पर! मेरी कही बात उसके लिए वेद-वाक्य बन जाती है। यह तो मेरे लिए सर्वथा नवीन अनुभव है, कोई मुझसे इतनी प्रत्याशा रखे! मेरी छाया तले साँस ले! मैं अकिंचन भला किसी को क्या दे सकता हूँ? सुप्रिया है कि हर पल एहसास कराती रहती है कि उसके जीवन के लिए मैं कितना महत्त्वपूर्ण हूँ। अच्छा लगता है यह एहसास... कितनी संतुष्टि, कितनी तृप्ति- क्या इसी को पुरुष की अहं-तुष्टि कहते हैं?

डायरी पढ़ना रोक वृद्ध विचार-मग्न हो गए थे। डायरी के पृष्ठ खुलते जा रहे थे...

हर पल ये एहसास गहराता जा रहा है कि मैं भी कुछ हूँ। सुप्रिया के साथ जीना कितना स्वाभाविक लगता है! गंगा के साथ स्वामिनी और सेवक का-सा भाव क्यों हावी रहता था मुझ पर? सुप्रिया मेरे मन की साड़ी पहिनती है, जो रंग मुझे भाता है उसके अलावा दूसरा रंग नहीं खरीदती। मनुहार करके मेरा मनपसंद खाना बनाती है। वहाँ तो भोजन भी बाबूजी के मन का खाना पड़ता था। अपने लिए इतना आयोजन एक अनजानी पुलक भर देता है।

ये मुझे क्या होता जा रहा है, सुप्रिया के बिना शायद जीवन जी न सकूं-पर घसीटना तो पड़ेगा। गंगा और अपने पुत्र के प्रति अन्याय कर रहा हूँ मैं। कितनी नासमझ है गंगा। अपने पति को किस विश्वास पर छोड़ निश्चिंत बैठी है! उसे यहाँ आने को कितनी बार लिख चुका हूँ, पर वह यहाँ आना ही नहीं चाहती। मुझे बुला रही हैं, मैं वापिस उसके पास चला जाऊं। वह समझती क्यों नहीं-पति को यूँ अकेले छोड़ देना क्या ग़लत नहीं है?

चश्मा उतार वृद्ध ने आँखें मूंद लीं। एकाध बार गंगा ने पति के पास जाने की दबे स्वर में इच्छा व्यक्त भी की थी, पर नाती के मोह ने उन्हें अन्धा बना दिया था। विवेक के साथ उनका बचपन लौट आया था। नाती और पुत्री के साथ मानस को वह भुला ही बैठे थे। गंगा को भेजा भी तब, जब सिर से पानी ऊपर आ गया था। कुछ उड़ती खबरों से वे एक क्षण को विचलित जरूर हुए थे, पर मानस पर विश्वास था, वह अन्याय कभी नहीं करेगा। अनदेखी लड़की पर बेहद क्रोध आया था उन्हें। कौन है ये सुप्रिया? मानस ने लिखा था...

आज सुप्रिया ने स्पष्ट कह दिया - मैं उसकी माँग में सिंदूर भले ही न डालूं, उसने अपने को मेरी पत्नी स्वीकार किया है। यह कैसे धर्म-संकट में डाल रही है सुप्रिया! गंगा को तुरंत आने का तार दे दिया है।

कुछ खाली पृष्ठों के बाद लिखा था- गंगा के यहाँ पहुँचते ही पड़ोसियों ने अपना पड़ोसी-धर्म निभा डाला है। दो दिन तक रो चुकने के बाद बात-बात में ताने देती है। बाबूजी ने भी कितने कठोर स्वर में कहा था- अच्छी दुश्मनी निभाई भइया, हमारे उपकार का यही फल देना था? मैंने पहिचानने में गलती की।

...गंगा को समझा-बुझाकर बाबूजी गाँव लौट गए हैं। घर आने पर गंगा कोंच-कोंच कर प्रश्न पूछती है, आस-पास कौन है, क्या है, का ध्यान भी नहीं रखती। घर का वातावरण कलहपूर्ण हो गया है। गलती न गंगा की है न मेरी... मेरी अहं को, मेरे पुरुष को मान तो सुप्रिया ने दिया है, वर्ना मैं तो सोया हुआ था।

सुप्रिया तीन माह की ट्रेनिंग के लिए दिल्ली जा रही है। कैसे रह सकूँगा उसके बिना? गंगा ने कहीं भी मेरे साथ न जाने की कसम खा ली है, उसका वश चले तो विवेक को भी मेरे पास न आने दे। मेरी हर चीज तलाशती है। कल एक छोटे-से पत्र के टुकड़े को लेकर किस कदर झगड़ा हुआ!

मैंने कड़े निर्देश दिए हैं - मेरी अनुमति के बिना मेरी कोई चीज छूना सर्वथा निषिद्ध है। विवेक मेरे सामने सहमा-सहमा रहता है। कैसे समझाऊं इस नादान को मेरा सोया पुरुष सिर्फ सुप्रिया को पहिचानता है।

एक सप्ताह को सुप्रिया आ रही है। कल शाम की ट्रेन से उसे रिसीव करना है। स्कूटर के ब्रेक ठीक नहीं लगते, उसे ठीक कराना होगा।

आज दिन-भर पानी बरसता रहा। अब स्कूटर की मरम्मत सुप्रिया के आने के बाद ही कराऊंगा।

डायरी का यही अंतिम पृष्ठ मानस के जीवन का भी अंतिम पृष्ठ था। बरसात से भीगी सड़क पर स्कूटर स्किट कर सामने लगे बिजली के खंभे से जा टकराया था। मानस का सिर पूरे वेग से खम्भे पर जा लगा था। पास के पानवाले ने गुहार मचा जब तक उसे अस्पताल पहुंचाया, सुप्रिया को रिसीव करने वाले नयन बंद हो चुके थे। स्टेशन कहाँ पहुंच सका था मानस!

कार्यालय में पहुंचते ही सुप्रिया को साथियों ने घेर लिया था। सुप्रिया विस्मित थी- कल स्टेशन पर लेने मानस क्यों नहीं पहुंचा? कहीं वह अस्वस्थ तो नहीं? मन नाना चिन्ताओं से घिरा हुआ था। जो सुना, वह अप्रत्याशित उसे जड़ बना देने को पर्याप्त था। मानस की खाली कुर्सी को एकटक निहारती सुप्रिया ने धीमे से अपनी बिंदी पोंछ पास खड़ी लड़की से कहा था- मुझे उनके घर जाना है, नमिता! पास खड़े सहकर्मियों के मध्य दबी उत्सुकता कुलबुला रही थी। कई शुभचिन्तक उसे मानस के घर तक पहुंचाने आगे बढ़ आए थे, पर सुप्रिया ने दृढ़ स्वर में कहा। उनका घर मेरे लिए अपरिचित नहीं, अच्छी तरह रास्ता जानती हूँ। आप लोग व्यर्थ अपना समय नष्ट न करें।

खिसियाए चेहरों पर आक्रोश परिलक्षित था- देखो तो लड़की का दुस्साहस, एक तो चोरी उस पर सीना जोरी!

सधे कदमों से मानस के घर की सीढ़ियाँ चढ़ सुप्रिया ने झुककर वृद्ध पिता के चरण छुए थे। गंगा की ओर ताक दृढ़ स्वर में सुप्रिया ने कहा था- तुम्हारी अपराधिनी मैं हूँ दीदी, जो चाहे दंड दे दो। एक ही प्रार्थना है, मेरा न्याय करते इतना जरूर याद रखना, तुम्हारा सम्मान अक्षुण्ण है, तुम सबकी सहानुभूति की पात्री हो और मैं? मैंने अपना मान-सम्मान सब कुछ खोकर जो पाया था आज उसकी राख भी शेष नहीं। क्या इससे बड़ा कोई और दंड होगा?

सुप्रिया की सूनी दृष्टि में अपनी छाया निहारती गंगा, उसे गले से लिपटा जोर से रो पड़ी थी। ◆◆◆

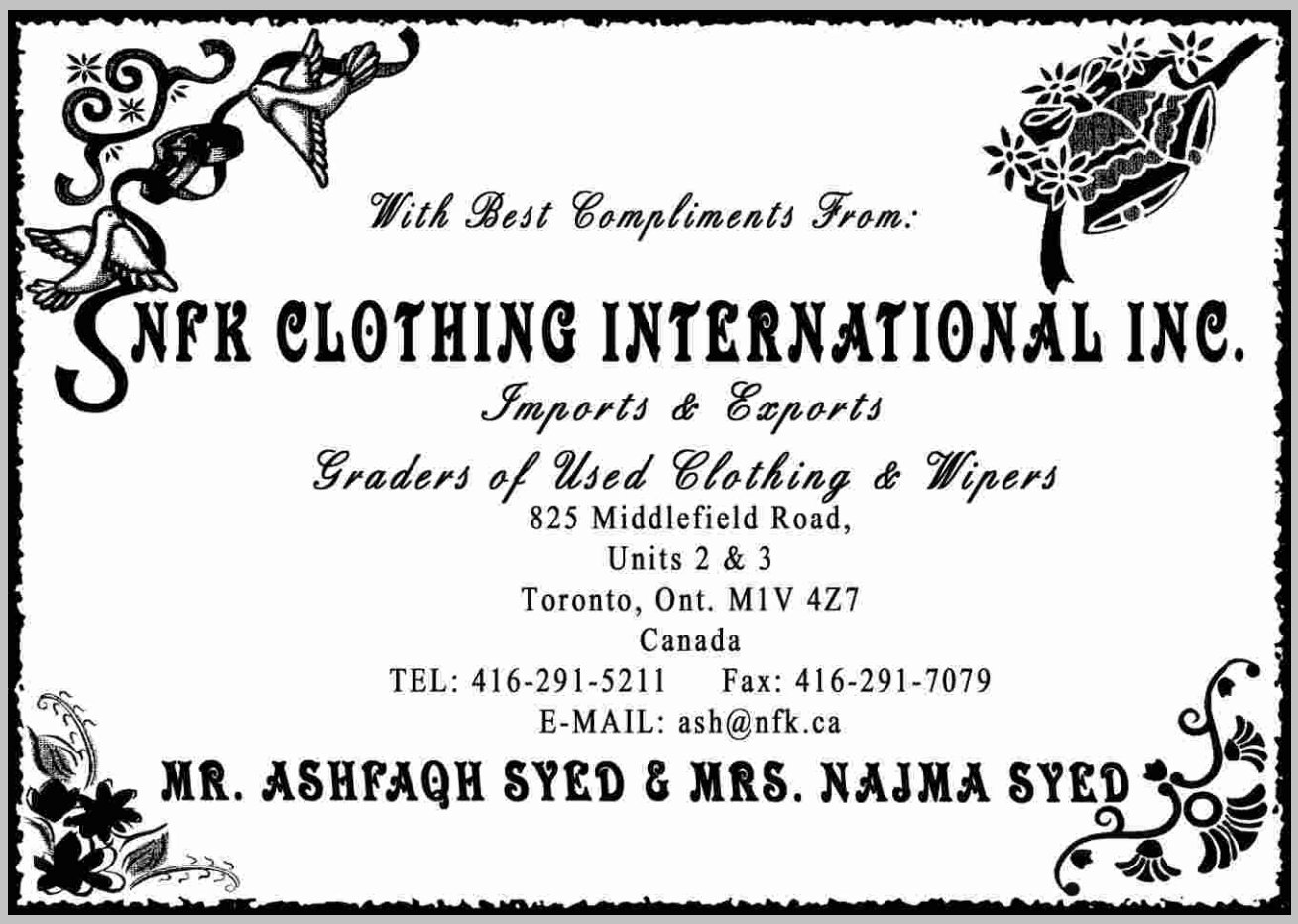

खो जाते हैं घर

सूरज प्रकाश, भारत

बब्बू क्लिनिक से रिलीव हो गया है और मिसेज राय उसे अपने साथ ले जा रही हैं। उन्होंने क्लिनिक का पूरा पेमेंट कर दिया है।

- ओके डॉक्टर, तो फिर मैं इसे ले जा रही हूं। कोई भी बात होगी तो मैं आपको फोन पर बता दूंगी। वे चलते समय डॉक्टर की अनुमति लेती हैं।

डॉक्टर ने उन्हें निश्चिंत किया है - ठीक है मैडम, आप इसे दवाएं देती रहें। कुछ ही दिनों में बिलकुल ठीक हो जायेगा। ओके बब्बू, बाय। आंटी को परेशान नहीं करना।

बब्बू ने कमज़ोर आवाज़ में कहा है - नहीं करूंगा।

डॉक्टर ने बब्बू के गाल सहलाकर उसे गुडबाय कहा है।

वे एक बार फिर डॉक्टर को याद दिला रही हैं - अगर वो आदमी आये इस बच्चे के बारे में पूछने तो मुझे तुरंत खबर करें। प्लीज़।

डॉक्टर ने उन्हें आश्वस्त किया है - श्योर, श्योर, हालांकि अब इतने दिन बीत जाने के बाद उसके आने की उम्मीद कम ही है, लेकिन जैसे ही वो आया, मैं आपको तुरंत खबर कर दूंगा। मुझे अभी भी यही लग रहा है कि उसने इस बच्चे को कहीं बुखार में तड़पते देख लिया होगा और खुद इसका इलाज कराने की हैसियत नहीं रही होगी इसलिए इसे यहां छोड़ गया।

- मुझे भी कुछ ऐसा ही लगता है। उसका अपना बच्चा होता कि कैसे भी करके एक बार तो ज़रूर ही मिलने आता ही। लेकिन बीच-बीच में ये दूसरे बच्चों की कहानियां सुनाता रहा है, उससे मामला और उलझ गया है। मिसेज राय ने अपनी आशंका व्यक्त की है।

- मेरे ख्याल से बच्चे के पूरी तरह से ठीक हो जाने के बाद ही सारी बातों के बारे में बेहतर ढंग से पता चल सकेगा।

- हां मेरा भी यही ख्याल है कि बच्चा अभी भी सारी बातें सिलसिलेवार नहीं बता पा रहा है। कुछ दिन तो इंतजार करना ही पड़ेगा।

मिसेज राय ने ड्राइवर से सारा सामान उठाने के लिए कहा है और वार्ड बॉय को इशारा किया है बच्चे को कार में बिठा देने के लिए।

बब्बू को कार में आराम से बिठा देने के बाद वे खुद कार में आयी हैं।

बब्बू जिंदगी में पहली बार किसी कार में बैठा है और हैरानी से सारी चीजें देख रहा है। बहुत

ज्यादा आरामदायक सीटें, ठंडी-ठंडी हवा, बहुत हौल-हौले बजता संगीत और पानी पर चलती-सी कार। वह शीशे से आंखें सटाकर बाहर का नजारा देखना चाहता है।

मिसेज राय उसे आराम से बिठाकर खिड़की के नजदीक सरका देती हैं।

वह अचानक कार में से अनुपस्थित हो गया है और बाहर भागती-दौड़ती दुनिया में शामिल हो गया है। मिसेज राय उसके सिर पर हौले-हौले उंगलियां फिरा रही हैं। वे अपनी तरफ से कुछ कह कर या पूछ कर बच्चे और उसकी दुनिया में बाधक नहीं बनना चाहतीं। उन्हें कोई जल्दी नहीं है।

बब्बू थोड़ी ही देर में कार के भीतर की दुनिया में लौटता है और उनसे आंखें मिलाता है।

वे मुस्कुराती हैं।

बब्बू भी उनकी मुस्कुराहट के बदले अपने चेहरे पर कीमती मुस्कुराहट लाने की कोशिश करता है।

उसका गाल सहलाते हुए पूछती हैं - बेटे, अब कैसा लग रहा है ?

वह हौले से कहता है - ठीक।

बदले में वह उनसे पूछता है - हम कहां जा रहे हैं ?

- घर, क्यों ?

- किसके घर ?

- अपने घर और किसके घर ?

- आपका घर कहां है ?

- लोखंड वाला में।

बब्बू चुप हो गया है। उसे सूझ नहीं रहा कि बात को आगे कैसे बढ़ाये। कभी किसी से उसने इतनी और इस तरह की बातें की ही नहीं हैं।

वह कुछ सोचकर अपने आप ही कहने लगता है - मेरा घर तो बहुत दूर है।

- कहां है तुम्हारा घर मेरे बच्चे ? उन्हें उम्मीद की कुछ किरणें नज़र आयी हैं।

- पता नहीं। बच्चे ने एक बार फिर उन्हें मझधार में छोड़ दिया है।

- अच्छा वो आदमी कौन था जो तुम्हें अस्पताल में छोड़ गया था ?

- मुझे नहीं पता।

- अच्छा इतना तो पता होगा कि तुम कहां रहते थे और किसके साथ रहते थे ?

- दोस्तों के साथ।

- कहां ?

- पुल के नीचे।

- जगह याद है ?

- नहीं।

- कोई खास बात याद है उस पुल के बारे में ?

- उधर मच्छर बहुत थे। रात भर काटते रहते थे।

- बंबई आये कितने दिन हुए होंगे तुम्हें ?

- पता नहीं।

- खाना कहां खाते थे ?

- कहीं भी खा लेते थे।

- सारा दिन क्या करते रहते थे ?

- कुछ भी नहीं।

- तुम्हारे वो दोस्त कहां मिल गये थे जिन्हें तुम रोज याद करते थे ?

- वहीं पुल के नीचे।

- क्या करते थे वो लोग ?

- सब अलग-अलग काम करते थे।

- तो तुम्हारा ख्याल कौन रखता था ?

- सब रखते थे।

- खाना पीना ?

- सब मिल कर खाते थे।

- तो तुम क्या करते थे ?

- कुछ नहीं, मैं तो बहुत छोटा हूं ना...।

- लेकिन हो उस्ताद। छोटू उस्ताद।

- मैं उस्ताद थोड़ी हूं।

- अच्छा, अपने घर की याद है तुम्हें ?

- हां।

- कौन-कौन हैं तुम्हारे घर में ?

- बाबू, अम्मा, दीदी... भाई...।

- तुम बंबई में कैसे आ गये ?

- ट्रेन में।

- कब की बात है ?

- पता नहीं ।

- तुम लोग बंबई क्या करने आ रहे थे ?

- शादी में।

- और कौन थे साथ में ?

- सब थे।

- तो तुम उनसे अलग कैसे हो गये ?

- पता नहीं।

- तुम्हारे मां-बाप तुम्हें ट्रेन में छोड़ गये थे क्या ?

- मुझे क्या पता।

- तुम कितने भाई-बहन हो ?

- चार।

- अच्छा...। तो तुम्हें बिलकुल याद नहीं है कि कहां पर है तुम्हारा घर ?

- बहुत दूर।

- लेकिन कहां ?

- गांव में।

- गांव का नाम याद है ?

- ज्वालापुर।

- और स्कूल का ?

- आदर्श स्कूल।

- और पिता जी का नाम ?

- बाबू।

- और मां का ?

- पता नहीं।

- बाबू क्या करते हैं ?

- दुकान है।

- तुम्हें तो बेटे कुछ भी अच्छी तरह याद नहीं या पता नहीं। ऐसे में अपने घर कैसे जाओगे ?

- पता नहीं।

- अपने बाबू अम्मा से कैसे मिलोगे ?

- पता नहीं।

बब्बू इतने सारे सवालों से थक गया है। और फिर उसे अपने घर की भी याद आने लगी है। उसने अपनी आंखें मूंद ली हैं। मिसेज राय भी समझ रही है कि उससे इतने सारे सवाल एक साथ नहीं पूछने चाहिये थे।

वे उसे चुप ही रहने देती हैं।

अचानक बब्बू ने आंखें खोली हैं - आंटी आप क्या करती हैं ?

- क्यों बेटे ?

- वैसे ही पूछा, आपकी गाड़ी बहुत अच्छी है। ठंडी-ठंडी।

- तुम्हें अच्छी लगी ?

- हां, आप भी।

- अरे बाप रे, हम भी तुम्हें अच्छे लगे, भला क्यूं ?

- आप रोज आती थी हमसे मिलने। इत्ती सारी चीजें लाती थीं और मारती भी नहीं थी।

- मैं क्यूं मारने लगी तुम्हें मेरे बच्चे ? तुम तो इतने प्यारे, इतने अच्छे बच्चे हो, भला कोई तुम्हें क्यों मारने लगा ?

- बाबू नहीं मारते थे। अम्मा मारती थी, दीदी, भइया मारते थे।

- बहुत खराब थे वो लोग। तुम्हें तो कोई मार ही नहीं सकता।

तभी उन्होंने ड्राइवर से कहा है - ड्राइवर, जरा सामने रेडीमेड कपड़ों की दुकान के आगे गाड़ी तो रोकना। अपने राजा बाबू के लिए कुछ कपड़े तो ले लें।

- मैं क्या करूंगा कपड़े ? बब्बू ने अपना जिक्र सुन कर पूछा है।

- क्यों कपड़ों का क्या करते हैं ?

- पहनते हैं। मैंने भी तो पहने हुए हैं।

- तुम इतने दिन से अस्पताल में थे ना, अब घर जा रहे हो इसलिए अच्छे कपड़े तो चाहिये ही ना। और खिलौने भी। बोलो कौन सा खिलौना पसंद है ?

- हम घर पर खिलौने से थोड़े ही खेलते थे।

- तो किस चीज से खेलते थे मेरे बच्चे ?

- वैसे ही खेलते रहते थे।

- बहुत भोले हो तुम बेटे, बच्चों को तो खिलौनों से खेलना ही चाहिये। है ना ?

गाड़ी एक स्टोर के सामने रुकी है। मिसेज राय बच्चे को ड्राइवर के साथ वहीं कार में ही छोड़ कर भीतर जाकर बच्चे के लिए ढेर सारे कपड़े और खिलौने ले कर आयी हैं।

कार में आते ही उन्होंने ड्राइवर से कहा है - अब सीधे घर चलें। हमारे बेटे को भी आराम करना चाहिये। है ना मुन्ना ? वे उसकी तरफ देख कर पूछती हैं।

वह सिर हिलाता है।

गाड़ी लोखंड वाला कॉम्पलैक्स में एक बहुत ही बड़ी और भव्य इमारत के आगे रुकी है। वे बच्चे को आराम से नीचे उतारती हैं। दोनों लिफ्ट तक आते हैं। बच्चा हैरानी से सारी भव्यता देख रहा है। उसके लिए ये दुनिया बिलकुल अनजानी और अनदेखी है।

लिफ्ट आने पर दोनों भीतर आये हैं।

बच्चा लिफ्ट में पहली बार आ रहा है और हैरानी से पूछता है - आंटी, ये कमरा क्या है ?

वे हंस कर बताती हैं - बच्चे ये कमरा नहीं है। ये लिफ्ट है। इससे ऊपर जाते हैं।

- अच्छा ये लिफ्ट है। टीवी पर एक बार पिक्चर में देखी थी।

वे अपनी मंजिल पर पहुंच गये हैं।

वे एक दरवाजे की घंटी बजाती हैं। दरवाजा बाई ने खोला है। वे उसे लेकर भीतर गयी हैं।

नौकरानी ने उनके हाथ से सामान ले लिया है और बच्चे को देख कर कहती है - हाय, किती छान मुलगा आहे। किसका है मेमसाहब ?

वे गर्व से बताती हैं - हमारा मेहमान है। अभी हमारे साथ ही रहेगा और सुनो, ये बाबा बीमार है। इसके लिए हलका खाना बनाना। पूरा ख्याल रखना इसका। ठीक...।

- ठीक है मेमसाहब। उसके हाथ बच्चे के गाल सहलाने के लिए मचलते हैं लेकिन वह खुद पर कंट्रोल करती है। बहुत मौके आयेंगे इसके। वह चुपचाप भीतर सामान रखने चली गयी है।

अपने कमरे में जाते ही उन्होंने बच्चे को भींचकर अपने सीने से लगा लिया है। वे ज़ोर-ज़ोर से रोये जा रही हैं। वे उसे भींचे-भींचे - मेरे लाल, मेरे लाल कहे जा रही हैं। उन्हें रोते देख बच्चा घबरा गया है और वह भी रोने लगा है।

- आंटी आप रो क्यों रही हो ?

- अरे पागल, मैं रो कहां रही हूं, ये तो... ये तो... खुशी के आंसू हैं।

- आंटी, खुशी के आंसू कैसे होते हैं।

- बहुत सवाल करता है रे। आदमी जब बहुत खुश होता है ना, तब भी रोता है।

- मैं तो जब भी रोता हूं तो खुशी के आंसू थोड़े ही आते हैं। जब गिर जाता हूं या भूख लगती है तो मैं तो सचमुच रोता हूं। आंटी, आपको चोट लगती है तो आप रोती हैं क्या ?

- पगले, बड़ों को जब चोट लगती है ना... तो वो चोट नजर नहीं आती। बस, पता चल जाता है कि चोट लग गयी है। समझे बुद्धू राम...।

- नहीं।

- तू नहीं समझेगा मेरे लाल। आ मैं तुझे समझाती हूं।

उसे लेकर एक तस्वीर के सामने ले कर आती हैं, लगभग पांच साल के एक गदबदे बच्चे की तस्वीर है। मुस्कुराते हुए बच्चे की तस्वीर।

- आंटी, ये किसकी तस्वीर है ?

- बेटे, ये मेरे पोते की तस्वीर है।

- पोता क्या होता है ?

- अरे बाप रे, कैसे बताऊं कि पोता क्या होता है। अच्छा देख। तू बेटा तो समझता है ना। जैसे तू अपने बाबू का बेटा है।

- हां।

- तो जो तेरा बेटा होगा ना वो तेरे बाबू का पोता होगा।

- मेरा बेटा कैसे होगा ? मैं तो इतना छोटा-सा हूं।

- अरे जब तेरी शादी होगी तब तेरा बेटा होगा ना वो तेरे बाबू का पोता होगा। समझे ?

- नहीं समझा।

- कोई बात नहीं। ये मेरे पोते की तस्वीर है।

- क्या नाम है आपके पोते का ?

- मेरे पोते का नाम है रिक।

- आंटी ये कैसा नाम है रिक ?

- बेटे, जहां वह रहता है वहां ऐसे ही नाम होते हैं।

- कहां रहता है वह ?

- फ्लोरिडा में।

- ये कहां है ?

- बहुत दूर। सात समंदर पार।

- आंटी समंदर क्या होता है ?

- समंदर माने, समंदर माने... चलो, एक काम करते हैं, तुझे शाम को समंदर दिखाने ले चलेंगे। अपने आप देख लेना।

- आप उसे अपने पास क्यों नहीं रखतीं आंटी ?

वे फिर से रोने लगी हैं - पगले मैंने उसे

आज तक देखा ही नहीं है। कितनी अभागी हूं। मेरा पोता पांच साल का हो गया और आज तक मैंने उसे देखा ही नहीं। पास रखने की बात तो दूर है। कभी-कभी फोन पर उसकी आवाज सुन लेती हूं तो मेरे कलेजे में ठंडक आ जाती है।

- आपने उसे देखा क्यों नहीं है आंटी?

- मेरा बेटा कभी उसे यहां लेकर आया ही नहीं।

- क्यों?

- उसके पास टाइम ही नहीं है। वह खुद भी अब यहां नहीं आता।

- क्यों नहीं आता?

- इन सारे सवालों का जवाब मेरे पास नहीं है बेटे। होता तो क्या तुझे अपने सीने से लगा कर रोती पगले।

बच्चा समझ नहीं पाता इतनी सारी बातें और उनके बंधन से अपने आपको मुक्त कर लेता है। अब अलग होने के बाद उसका ध्यान घर पर, वहां रखे इतने सारे सामान पर और शानो-शौकत पर गयी है। उसने पूरे घर का एक चक्कर लगाया है और लौट कर उनके पास वापिस आया है।

- आंटी इतने बड़े घर में आप अकेली रहती हैं?

सिर हिला कर बताती हैं - हां।

- आपको डर नहीं लगता?

- लगता है।

- किससे?

- बेटे, एक डर हो तो बताऊं। कभी अपने आपसे डर लगता है तो कभी अपने अकेलेपन से डर लगता है। कभी अपने बुढ़ापे से डर लगने लगता है। बोल तू मेरे साथ यहां रहेगा मेरा डर दूर करने के लिए?

- मेरे रहने से आपका डर दूर हो जायेगा आंटी?

- तू नहीं जानता मेरे बेटे तू कितना प्यारा है तेरे यहां रहने से इस घर का सारा अंधेरा दूर हो जायेगा।

- आंटी आप जोक मारती हैं। घर में अंधेरा कहां है। इतनी रोशनी है।

- हां बेटे, बाहर से ही तो रोशनी नजर आती है। भीतर का अंधेरा ऐसे ही थोड़ी नजर आता है। बोल ना रहेगा मेरे पास। मैं तुझे खूब पढ़ाऊंगी।

अच्छे स्कूल में तेरा एडमीशन कराऊंगी। तू खूब पढ़ लिख कर फिर मेरी मदद करना। मेरा डर दूर करना। करेगा?

- लेकिन मेरे दोस्त?

- दोस्त तो ठीक हैं बेटे लेकिन हम उन्हें ढूंढें कहां? तुम्हें सिर्फ पुल के अलावा कुछ भी तो याद नहीं? कितना अच्छा होता तुम्हारे मां-बाप भी मिल जाते।

- लेकिन मैं दोस्तों के पास ही जाऊंगा।

- अच्छा एक काम करते हैं। तुम जरा ठीक हो जाओ तो बंबई में जितने भी पुल हैं हम सब जगह जायेंगे और तुम्हारे दोस्तों का पता लगायेंगे। चलोगे न हमारे साथ?

- चलूंगा। आंटी कबीरा मेरा बहुत ख्याल रखता है और फिर मोती भी तो है। मैं आपको सबसे मिलवाऊंगा।

- ये मोती कौन है?

- आंटी मोती हमारा कुत्ता है। बहुत सयाना है। झट से बता देता है कि दोस्त कौन है और दुश्मन कौन।

- अरे वाह कैसे बता देता है भाई?

- आंटी, वे जब किसी को देख कर सिर हिलाये तो इसका मतलब है कि वो दोस्त है और जब किसी को देखकर भौंकना शुरू कर दे तो इसका मतलब है कि सामने वाला दुश्मन है।

- अरे वाह, ये तो बहुत मजेदार बात है। हमें मिलवायेगा तू मोती से?

- हां आंटी और एक गप्पू भी है हमारे साथ। हर समय उसकी निकर नीचे उतरती रहती है। खूब मजा आता है।

- अरे वाह, चल बेटे अब तू आराम कर ले जरा। मैं भी कुछ काम धाम निपटा लूं। जब भूख लगे तो मुझे या माया आंटी को बता देना। ठीक है। लो इस कमरे में आराम करो, ठीक है। बाद में बात करेंगे।

- अच्छा आंटी।

- अब से तुम इसी कमरे में रहोगे।

- ये इत्ता बड़ा कमरा मेरे अकेले के लिए?

- क्यों? डर लगता है क्या?

- नहीं। ठीक है आंटी।

मुन्ना लेट तो गया है लेकिन उसे नींद नहीं आ रही। ये सारी चीजें, यहां का माहौल और तामझाम उसकी कल्पना से परे हैं। वह उठ बैठा है। वह पूरे घर में घूम-घूम कर देख रहा है। सारी चीजें उसके लिए नई हैं और उसने पहले कभी नहीं देखी हैं। वह कभी स्टीरियो देखता है तो कभी रंगीन टेलिफोन। कभी-कभी तस्वीरें देखता है और मूर्तियां। जब चारों तरफ की चीजें देख चुका तो वह आंटी के दिये खिलौने अकेले खेलने लगा। वह देर तक अकेले बैठे उन सारे खिलौनों को उलटता पलटता रहा। उसकी दिक्कत ये है कि ज्यादातर

खिलौने या तो बैटरी वाले हैं या उन्हें चलाना उसके बस में नहीं। थक हार कर उसने सारी चीजें एक तरफ सरका दी हैं।

मिसेज राय बच्चे को जुहू घुमाकर लायी हैं। उसने अपनी ज़िंदगी में पहली बार समुद्र देखा है। बेशक वह तीन महीने से मुंबई में भटक रहा था लेकिन पता नहीं कैसे वह समुद्र तक पहुंच नहीं पाया। उसे कोई भी उस तरफ नहीं लेकर गया। वह समुद्र से मिल कर बहुत खुश हुआ और पानी में खूब अठखेलियां की उसने। बेशक मिसेज राय डर रहीं थी कि बच्चा अभी ही तो बीमारी से उठा है, कहीं समुद्र की ठंडी हवा उस पर कोई असर न कर दे, लेकिन बच्चा मस्त होकर पानी से खूब खेलता रहा। वह कभी लहरों से दूर भागता तो कभी पानी के एकदम पास जाना चाहता। मिसेज राय ने खुद भी उसके साथ झूले में बैठीं, घोड़ा गाड़ी की सवारी की और गुब्बारे लेकर उसे साथ-साथ गीली रेत पर दौड़ती रहीं। उन्होंने अरसे बाद अपने आपको पूरी तरह से भूल कर, बच्चे के साथ बच्चा बन कर एक नया अनुभव लिया।

घर पहुंच कर बच्चा बिफर गया है। उसे अपने दोस्तों की याद आ गयी है। वह रुआंसा हो गया है - आंटी, मुझे कबीरा के पास जाना है।

मिसेज राय की परेशानी बढ़ गयी है - देखो बेटे, अभी तुम्हारी तबीयत पूरी तरह से ठीक नहीं हुई है। अभी तो कुछ दिन तुम्हें दवा खानी है। हम तुम्हें इस तरह से बाहर नहीं भेज सकते। एक काम करते हैं हम। कल हम गाड़ी में जाकर पूरे शहर में कबीरा को खोज निकालेंगे। तब हम उसे कहेंगे कि तुमसे रोज मिलने आया करे या हम ड्राइवर से कह देंगे वह कबीरा को ले आया करेगा।

बच्चे को आशा की किरण दिखी है - मोती को भी लायेगा ?

बच्चे को इतनी आसानी से मान जाते देख मिसेज राय सहज हो गयी हैं। लपककर आश्वस्त किया है उसे - ठीक है मोती को भी लायेंगे। बस, अब तुम आराम करो बेटे। इतनी देर पानी में खेले तुम।

लेकिन बच्चे की लिस्ट अभी पूरी नहीं हुई है - गप्पू को भी ?

मिसेज राय को यह शर्त भी महंगी नहीं लगी- ठीक है गप्पू को भी, हम भी देखें कि उसकी नेकर कैसे नीचे उतरती है। चलो अब आप आराम करो। आपकी दवा का भी टाइम हो रहा है।

अब बच्चा अपने सवालों की दुनिया में वापिस आ गया है। पूरी शाम जुहू पर जो सवाल पूछता रहा, फिर से उसके ध्यान में आ गये हैं - आंटी, समुद्र में इतना पानी कहां से आता है ?

मिसेज राय ने उसे समझाने की कोशिश कर रही हैं - अरे बेटा, तुम अभी भी वहीं अटके हो। देखो ऐसा है कि समुद्र में पहले से ही इत्ता सारा पानी है।

- आंटी, समुद्र सब जगह क्यों नहीं होता ?

- अगर समुद्र सब जगह होगा मेरे भोले बेटे तो हम रहेंगे कहां ?

- सब जगह पानी रहेगा तो कित्ता मजा आयेगा, पानी में खेलते रहेंगे हम।

- तो स्कूल कब जायेंगे, काम कब करेंगे और दवा कब खायेंगे नटखट राम जी ?

- हम दवा नहीं खायेंगे, कड़वी लगती है।

- दवा नहीं खाओगे तो ठीक कैसे होवोगे, बोलो, तब कबीरा और गप्पू के साथ कैसे खेलोगे। उन्होंने उसे ब्लैकमेल किया है।

- ठीक है खाऊंगा। वह अपने ही फंदे में फंस गया है।

सबेरे का समय है। वह सो रहा है। मिसेज राय ऑफिस जाने की तैयारी कर रही हैं। उसके पास आकर प्यार से वे उसे चूमती हैं।

नौकरानी को आवाज देती हैं - माया, सुनो, हमें शाम को वापिस आने में देर हो जायेगी। बच्चे का पूरा ख्याल रखना। मैं बीच-बीच में फोन करती रहूंगी।

- ठीक है मेम साहब

- जब बच्चा जग जाये तो उसे गरम पानी से नहला देना। उसे अपने आप खेलने देना। खाना वक्त पर खिला देना।

- अच्छा मेम साहब

- बच्चे को टाइम पर दवा दे देना। मालूम है ना कौन-सी गोली देनी है।

- मालूम।

मिसेज राय एक बार फिर बच्चे के गाल चूम कर जाती हैं।

बच्चे ने जागने के बाद सबसे पहले पूरे घर में आंटी को ढूंढा है।

कहीं नहीं मिलीं उसे। रुआंसा हो गया है वह। उसे रसोई में माया नजर आयी हैं। अब वह उसे भी पहचानने लगा है। - आंटी कहां है ?

- काम पे गयी मेम साब।

- कहां ?

- आपिस।

- आपिस क्या होता है ?

- आपिस माने कचेरी।

- कचेरी क्या होता है ?

- वो सब हमको मालूम नईं। मेमसाब रोज जाता आपिस। शाम कू आता। बाबा, तुम दूध पीयेंगा अब्भी। फिर तुम नहा कर खेलना।

- आज कबीरा आयेगा ?

- हां, मेमसाहब बोला कि ड्राइवर जा के कबीरा को खोजेंगा और फिर मुन्ना बाबा और कबीरा एक साथ खेलेंगा।

बच्चा खुश हो गया है। अब उसे आंटी नहीं चाहिये - मोती भी आयेगा ना ?

- हां मोती भी आयेगा।

लेकिन माया के आश्वासन के बावजूद कबीरा नहीं आया है। वह कई बार बाल्कनी में, बड़े वाले कमरे में और पूरे घर में टहलते हुए अपने दोस्तों का इंतजार कर रहा है। ड्राइवर भी अब तक वापिस नहीं आया है। उसे बेशक स्नान कर लिया है, दूध पी लिया है, दवा भी खा ली है लेकिन उसका ध्यान लगातार दरवाजे पर ही लगा रहा है और एक पल के लिए भी वह आराम नहीं कर पाया है। माया के बार-बार कहने के बावजूद वह सोने के लिए तैयार नहीं हुआ है। कहीं ऐसा न हो कि कबीरा वगैरह आयें और उसे सोया पा कर लौट जायें।

वह अकेले बोर हो रहा है। सारे कमरे में खिलौने बिखरे पड़े हैं। वह कभी बालकनी में जा रहा है और कभी भीतर आ रहा है। उसका मूड बुरी तरह से उखड़ा हुआ है। वह इस बीच कई बार रो चुका है। उसे समझ में ही नहीं आ रहा कि क्या करे।

तभी फोन की घंटी बजी है। उसे समझ नहीं आता कि फोन की आवाज सुन कर क्या करे। उसे फोन उठाना नहीं आता। तभी लपकती हुई माया आयी है और उसने फोन उठाया है। वह फोन सुनते हुए लगातार हां हां कर रही है। फिर उसने उसे बुलाया है - बाबा मेमसाहब का फोन है। आप से बात करेंगा।

बच्चा फोन लेता है लेकिन समझ में नहीं

आता उसे कि कैसे पकड़ना है। माया उसे बताती है और कहती है - हैलो बोलने का।

- हैलो, आंटी आप जल्दी आओ। कबीरा नहीं आया।

मिसेज राय उसे बताती हैं - हम जल्दी आयेंगे बेटा। तुम आराम करो। ठीक है।

- ठीक है। फोन माया को लौटा देता है।

बच्चे का मूड बुरी तरह बिगड़ा हुआ है। वह ज़ोर-ज़ोर से रोये जा रहा है। माया उसे कभी गोद में उठा कर चुप कराने की कोशिश करती है तो कभी खिलौने देकर बहलाना चाहती है लेकिन बच्चा है कि एकदम बिफर गया है और किसी भी तरह से काबू में नहीं आ रहा है। माया इस बीच कई बार कोशिश कर चुकी है कि मेमसाहब को फोन पर बताये कि बच्चा किसी भी तरह से काबू में नहीं आ रहा है, वह करे तो क्या करे, लेकिन वे किसी मीटिंग में हैं और उन तक वह कैसे भी करके संदेश नहीं दे पा रही। आज तक उसके सामने ऐसी स्थिति नहीं आयी थी। उसने कभी अपनी तरफ से मेम साहब को फोन ही नहीं किया है।

माया उसे बहलाने की कोशिशें कर रही है लेकिन उसे समझ में नहीं आता कि क्या करें। तभी माया ने उसे पैंसिल और कागज लाकर दिया है। बच्चा उस पर आड़ी तिरछी रेखायें खींचने लगा है। कुछ देर के लिए वह बहल गया है। ये देख कर माया की जान में जान आयी है। वह रेखाएं खींच रहा है। कभी गोल, कभी सीधी। उसका मन बहल गया है और वह अब उसी में मस्त है। कागज रंगते रंगते उसे नींद आ गयी है और वह वहीं सो गया है।

वह बालकनी में खड़ा है। नीचे पार्क में बच्चे खेल रहे हैं। वह थोड़ी देर उन्हें खेलते देखता रहता है। फिर माया से पूछता है - मैं नीचे खेलने जाऊं।

- जाओ बाबा, लेकिन जल्दी आ जाना।

माया उसके कपड़े बदलती है और जूते पहनाती है और उसके लिए दरवाजा खोल देती है।

माया को नहीं मालूम कि यह बच्चा इस दुनिया का नहीं है। वह जहां से आया है, वहां लिफ्ट, बहुमंजिला इमारतें, चिल्डर्न पार्क और ये सारे तामझाम नहीं होते। वह बच्चा इस दुनिया में खुद नहीं आया, बल्कि लाया गया है और उसे कई सारी चीजों के बारे में बिलकुल भी नहीं पता।

माया ने तो ये देखा कि बच्चा घर में बैठे-बैठे बोर हो रहा है तो थोड़ी देर नीचे खेल कर लौट आयेगा। माया को ये बात सूझ ही नहीं सकती कि

वह कदम बढ़ाता है, लेकिन उसे याद ही नहीं आता कि वह किस बिल्डिंग में से निकल कर आया था। कभी एक बिल्डिंग की तरफ जाता है और कभी दूसरी की तरफ। वह लड़खड़ा रहा है, और घबरा कर रोने लगा है। वह अपना घर भूल गया है। वह रोते-रोते भटक रहा है और अपनी इमारत से काफी दूर आ गया है।

बच्चे को खुद नीचे ले जाये और अपने सामने थोड़ी देर तक खिला कर वापिस ले आये।

वह थोड़ी देर तक लिफ्ट के आगे खड़ा रहता है लेकिन उसे समझ में नहीं आता कि इसे कैसे खोले। इधर माया ने भी दरवाजा बंद कर दिया है। उसे डोर बैल के बारे में पता है लेकिन उस तक उसका हाथ नहीं पहुंचता। वह तीन चार बार हौल हौले से दरवाजा थपकाता है लेकिन भीतर काम कर रही माया तक आवाज नहीं पहुंचती।

वह धीरे धीरे सीढ़ियां उतरने लगता है।

वह बच्चों के पार्क में पहुंच गया है और उन्हें खेलता हुआ टुकुर-टुकुर देख रहा है। वैसे भी वह उन बच्चों के सामने अपने आपको बौना महसूस कर रहा है। धीरे-धीरे वह सामने आता है लेकिन तय नहीं कर पाता कि कौन-सा खेल खेले या किस खेल में शामिल हो जाये। अचानक एक गेंद लुढ़कती हुई उसके पैरों के पास आती है और वह उसे उठाकर एक लड़के को दे देता है। पता नहीं कैसे होता है कि वह भी उनके खेल में शामिल हो जाता है। उसे अपना लिया गया है और उसे अच्छा लगने लगता है। वह सब कुछ भूल कर खूब मस्ती से खेल रहा है।

काफी देर तक वह उनके साथ खेलता रहता है।

इस बीच अंधेरा घिरने लगा है और सारे बच्चे अकेले वापिस जा रहे हैं या अपनी-अपनी आयाओं, बहनों, माताओं के साथ लौट रहे हैं।

वह भी खेल कर थक गया है और वापिस लौटना चाहता है।

वह कदम बढ़ाता है, लेकिन उसे याद ही नहीं आता कि वह किस बिल्डिंग में से निकल कर आया था। कभी एक बिल्डिंग की तरफ जाता है और कभी दूसरी की तरफ। वह लड़खड़ा रहा है, और घबरा कर रोने लगा है। वह अपना घर भूल गया है। वह रोते-रोते भटक रहा है और अपनी इमारत से काफी दूर आ गया है।

अंधेरा पूरी तरह घिर चुका है।

सड़क पर रोता हुआ अकेला बच्चा चला जा रहा है।

बच्चा वापिस सड़क पर आ गया है।◆◆◆

Far Eastern Books

(Estd. 1976)

http://www.worldwidebookstore.net e-mail: books@febonline.com

Leading Publisher and Distributors

Books, Periodicals & Multi-Media Material In International languages

A single and reliable source for the supply of print & non-print material from the Indian sub-continent at competitive rates, including:

- *Popular titles in English*
- *Fiction & Non fiction in major regional languages such as, Bengali, Gujarati, Hindi, Punjabi, Urdu, Tamil etc.*
- *Single and dual language children books*
- *Educational material for classrooms*
- *Journals & Periodicals*
- *CD & DVD Labels.*

Tel: (905) 477-2900 Toll Free: (800) 291-8886 Fax: (905) 479-2988

250 COCHRENE DRIVE, SUITE 14, MARKHAM, ON. L3R 8E5

R. Kakar Medicine Professional Corporation

Neo Unlimited Medical Assessments (NUMA)

Neo Pharmaceutical Ltd.

Neo EMR Psych

President, Consultant Psychiatrist

Dr. R Kakar M.B.B.S., M.D., L.M.C.C, F.R.C.P.(C)., M.C.S.M.E.

Voted by "Esteemed World Professional Association of Who's Who"

As Member of The Year

2008 - 2009

Address Suite 222, 3447 Kennedy Road

Tel: 416-298-2090 Agincourt, ON. M1V 3S1

416-298-2363 Cell: 647-271-4260 Office Hours

Fax: 416-298-3493 E-Mail: rvkakar@yahoo.ca By Appointment

Anil Bhasin

अनिल भसीन

१९९० से आपकी सेवा में

घर होता है जीवन का आधार।
घर वोह है, जहाँ मिले सुख – शान्ति और प्यार॥
जो भी "अनिल" के पास आया
उसने अपने सपनों का घर पाया॥

FREE
HOME
EVALUATION

Anil Bhasin

Sales Representative
Remax Realtron Realty Brokerage Inc.
183 Willowdale Avenue,
Toronto, M2N 4Y9
Cell: 416-410-GHAR(4427)
fax: 416-981-3400
anil@ghar.ca
www.ghar.ca

RE/MAX

ANIL BHASIN'S
GHAR.CA
GHAR MEANS HOME

RE/MAX® Remax Realtron
Realty Brokerage Inc

Tel: 416-222-8600 Fax: 416-221-0199
183 Willowdale Avenue, Toronto, M2N 4Y9
Independently owned

तमाचे

प्रतिभा सक्सेना, अमेरिका

उसके बारे में मैंने कभी सोचा भी नहीं था। ऐसी कोई बात भी उसमें नहीं थी जो ध्यान आकर्षित करती। हाँ, दिन भर में दो- चार बार उससे सामना जरूर हो जाता था, पर नमस्कार-चमत्कार और रोज़मर्रा की चलती हुई बातों से आगे कुछ हुआ हो ऐसा याद नहीं पड़ता। उसके घर जाने का तो प्रश्न ही नहीं उठता था। लोगों को उसे 'सुखवीरा' कह कर आवाज़ लगाते सुना था, पर मैं हमेशा सुखवीर ही कहता था। किसी का नाम बिगाड़ना उचित नहीं लगता था मुझे। मौज में आकर सामनेवाले को 'यार' कह बैठना मेरी पुरानी आदत है, चाहे सामनेवाला बच्चा ही क्यों न हो। उससे भी अनायास कह देता हूँ 'यार सुखवीर, चाय नहीं पिलवाओगे?'

हो सकता है कभी कोई बात निकली हो और मैंने कुछ कह दिया हो। पर ऐसी कोई बात नहीं थी जो याद रखने योग्य हो। वैसी कोई बात वह मन में रखे है, यह भी मुझे बाद में ही पता लगा। उसी ने कहा कि वह एक दिन मुझे अपने घर चाय पीने बुलानेवाला है। इसमें भी मुझे कोई विशेष बात नहीं लगी। सच तो यह है कि एक बार सुनने के बाद मैंने दुबारा उस बारे में सोचा भी नहीं।

लेकिन अपने साथ के और लोगों से उसमें थोड़ी भिन्नता जरूर थी और लोग जहाँ पैजामा पहने चले आते थे, वह हमेशा बुश्शर्ट-पैंट पहनता था। बोलने की भी उसकी आदत कम थी, चेहरे से ही कुछ गंभीर-सा लगता था। इसीलिये उससे बात-चीत करना मेरे लिये कभी प्रयासपूर्ण नहीं रहा। हां, बाद में कभी-कभी मुझे लगता था वह अधिक सभ्य दिखाई देने का प्रयत्न करता है। कपड़े भी कलफ-क्रीज़ से दुरुस्त रहने लगे थे - कभी एकाध बालों का छल्ला भी माथे पर आ जाता था। किन्तु इस सब पर मेरा ध्यान कभी टिका नहीं। एकाध बार सुनने में आया कि वह अपने साथियों में मेरी मित्रता का दम भरता है तो भी मैंने इस विषय पर कुछ ध्यान नहीं दिया। लोगों की तो कुछ भी कह देने की आदत होती है। न मेरे व्यवहार में कोई परिवर्तन आया, न उसके।

अप्रत्याशित ही एक दिन जब उसने कहा कि आनेवाले इतवार को मैं उसके घर चाय पर आऊँ तो मैंने पूछ लिया, 'क्या कोई ख़ास बात है?'

'नहीं आपको बुलाने की बहुत दिनों से इच्छा थी।'

व्यर्थ में दीनता प्रदर्शित करते मैंने उसे कभी देखा नहीं था और ऐसा करना मुझे अच्छा भी नहीं लगता।

'कोई और भी आयेगा?'

'आप कहें उसे और बुला लूँ?'

'नहीं, नहीं उसकी कोई ज़रूरत नहीं। मैंने तो यों ही पूछ लिया।' और चार बजे उसके घर पहुँचने की स्वीकृति मैंने दे दी।

'घर तो वहीं मल्लूपुरे में है?'

'हाँ। मेरा नाम ले देंगे तो कोई भी बता देगा। चौराहे से आगे बढ़ कर जहाँ पीपल का पेड़ है... नहीं, नहीं मैं आपको लेने आ जाऊँगा। आप कहाँ ढूढते फिरेंगे।'

'कोई ज़रूरत नहीं। मैं ढूँढ लूंगा। आ जाऊँगा।'

'मुझे साढ़े तीन बजे इधर काम भी है, लौटते पर आपको साथ लेता चलूँगा।'

चलो, यह भी तय हो गया, सोच कर मैं निश्चिंत हो गया। आगे सोच-विचार करने को कुछ था भी नहीं।

शनिवार को छुट्टी के समय उसने मुझे फिर याद दिलाया, वैसे भूला मैं भी नहीं था। पौने चार पर मैं तैयार मिलूँ -बात हो गई।

इतवार को सुबह से ही एक पुराने मित्र अपने घर खींच ले गये - खाने-पीने और ताश का स्पेशल प्रोग्राम था। वहाँ लेट खाना हुआ, फिर खेल ऐसा जमा कि समय का ध्यान ही नहीं रहा। शाम की चाय की बात हुई तो एकदम ध्यान आया। घड़ी पर निगाह गई - पौने चार बजने में कुल पाँच मिनट!

फ़ौरन मैंने बिदा माँगी और चल पड़ा।

रास्ते में सोचा घर पहुँचने में दस-पन्द्रह मिनट लग जायेंगे, चार बज चुके हैं। वह घर पहुँचे और मैं नहीं मिलूँ तो वह क्या सोचेगा! सीधा उसी के घर क्यों न चला चलूं, इधर से रास्ता भी पास पड़ेगा।

मकान का पता लगा ही लूँगा -पीपल के पेड़वाले रास्ते का उसका कथन मेरे ध्यान में था ही।

स्कूटर मोड़ लिया। दो-तीन ऊबड़-खाबड़ गलियों को पार कर सड़क पर आ गया। चौराहे के आगे पीपल का पेड़ दिखाई दिया तो लगा सही जगह आ गया। यहीं से उसका नाम लेकर पता लग जायेगा। किसी साधारण-से मकान की खोज में मैं आगे बढ़ आया।

बीस-पच्चीस कदम पर म्युनिसिपालिटी का नल था, जिसके चारों ओर कीचड़ फैली थी। नल का पानी जिस ओर बह कर जाता था उस ओर एक गली-सी थी जहाँ आमने-सामने के मकानों की दो स्त्रियां दरवाज़ों पर खड़ी वाक्युद्ध में लीन थीं। उन्हें डिस्टर्ब करना मैंने उचित न समझा। उसी स्थिर पानी वाले नाले के मोड़ के पास एक खोंचेवाला था जो अपने हाथ से बार-बार अपने सामान पर आ बैठनेवाली मक्खियों के झुण्डों को उड़ा देता था। मक्खियां भन्-भन् करती वहीं मँडरातीं और फिर यथास्थान बैठ जातीं। खोंचेवाले की सुस्ती के फलस्वरूप वे काफ़ी ढीठ हो गई लगती थीं। उसी के पास दसेक बरस का लड़का खड़ा हुआ, चाट-चाट कर कुछ खा रहा था और सी-सी करता हुआ कमीज़ की बांह में नाक पोंछता जा रहा था।

'ए लड़के,' मैंने तर्जनी उठा कर आवाज़ दी।

लड़का आगे बढ़ आया।

'यहाँ कोई सुखवीर सिंह रहते है?'

पत्ता फेंक कर लड़के ने खीसें निपोरीं, बोला, 'मैंने यहां के सब लोगों को जानने का ठेका ले रखा है क्या?'

सिटपिटाया-सा मैं चलने ही वाला था कि खोंचेवाले ने आवाज़ लगाई, 'बाऊ जी, ऐ बाऊ जी, किसे पूछते हो?'

डूबते को जैसे तिनके का सहारा मिला 'सुखवीर सिंह' का मकान? उन्होंने इधर ही बताया था।'

'कौन से सुखवीर सिंह?'

'वही जो आबकारी के दफ्तर में काम करते हैं।'

'अच्छा, वो सुखवीर!'

उसके कहने के ढंग से मैं कुछ हतप्रभ हो गया।

अपने आप को कोस रहा था कहाँ आ फँसा! अपराधी-सा फिर बोला, 'हाँ, हाँ, वही। कहाँ रहते हैं?'

'कुछ खास काम होगा।' कहते हुये उसने वाक्युद्ध-रत स्त्रियों की ओर हाथ उठाया और मेरी ओर देख कर मुस्करा दिया।

'नहीं, कुछ खास काम नहीं, यों ही चला आया था,' मैं बोलते-बोलते हकला गया।

अब तो उन्हीं वीरांगनाओं का आसरा था।

नाली के इस पार जो दरवाज़ा था उस पर खड़ी हुई युवती है या अधेड़ एकदम से पता नहीं लगता था। उसकी साथिन-प्रतिद्वंद्विनी अवश्य अधेड़ थी। फ़ैशन के अनुसार खुले सिर के अस्त-व्यस्त बालों को बार-बार खुजलाती हुई, मुसी हुई धोती के बेढंग से पड़े पल्ले को और ज़ोर से खींचती हुई चीख रही थी, 'तेरे अपने तो दूधपीते बच्चे हैं। जब देखो कभी छुन्नू को मार भागते हैं, कभी लच्छू को, तो वो नई मारेंगे? अरे मैं तो अब तक लिहाज करे थी। पर अब तू बढ़ती चली आ रही है। मेरे पिरेमू को मारे उसकी खाल उधेड़ दूँगी।'

'बड़ी आई खाल उधेड़ने वाली! पीटेगा छुन्नू जो इसने बदमासी की...।'

'चल आ जा पिरेमू,' देह से फिसलता धोती का पल्ला सम्हालती दूसरी ने आवाज़ लगाई।

पत्ता चाटता लड़का पीछे घूमा, 'अब्भी आया!'

अब तक मेरी समझ में आ चुका था सुखवीर

का घर उसने क्यों नहीं बताया था।

किस प्रकार से किस वीरांगना को अपनी ओर उन्मुख करूँ, सोच ही रहा था कि खोंचेवाले ने आवाज़ लगाई, 'अरी, झगड़ा पीछू कर लियो, पेले देखो कि कोई भला आदमी दरवज्जे पे आया खड़ा है।'

'ठीक है अब मैं चला जाऊँगा,' खोंचेवाले से कह कर मैं गली की ओर मुड़ गया।

पर आवाज़ देते-देते रह गया। दूसरी ओर से सुखवीर साइकिल से आ रहा था।

एकदम सामना न हो जाये, कुछ समय निकालने के लिये मैं मुड़ कर सड़क की ओर वाले पनवाड़ी से पान खरीदने लगा। पान लेकर रुपया दिया तो टूटे पैसे लेने में देर लग गई। फिर सुस्त चाल से आगे बढ़ कर गली में पहुँचा।

दरवाज़ा आधा खुला था। दूसरीवाली स्त्री अब साफ़-सुथरी धोती पहने थी और बड़े ताव में कह रही थी, 'मरे कमबखत यों ही किया करें! फेर दिया पानी पच्चीस रुपैये पे! इसमें कुछ और डाल कर तो छुन्नू का सूट बन जाता।'

सुखवीर सड़क की तरफ़ पीठ किये था, 'मुझे क्या पता था, पहले तो उसी ने कहा था, तुम्हारे घर आयेंगे। अब नई आया तो क्या करें?'

इतने में पीछे से मैंने आवाज़ लगाई, 'सुखवीर सिंह।'

मुड़ते-मुड़ते वह बोला, 'ले, वो आ गया। अब बंद कर बक बक।'

स्त्री फ़ौरन अन्दर हो ली।

सुखवीर मेरी ओर घूम गया, 'अरे आप! मैं तो लेने गया था।'

'हाँ, इधर किसी काम से आया था। देर हो गई तो सोचा इधर से ही निकल चलें।'

'कोई परेशानी तो नहीं हुई?'

'परेशानी काहे की? पता तो मालूम था न।'

मुझे लेकर वह कमरे के साइड के गलियारे से होकर भीतर दाखिल हुआ।

एक छोटे कमरे में एक मेज़ के दोनो ओर कुर्सियाँ पड़ी थीं, मेज़ पर बड़े-बड़े फूलोंवाला मेज़पोश, एक तरफ़ बेडकवर युक्त चारपाई। कमरे में मुझे छोड़ते हुये सुखवीर ने कहा, 'आप बैठिये, मैं अभी आया।'

पर मुड़ते-मुड़ते उसकी नज़र मेरी नज़र के साथ ही अन्दर जा पड़ी।

'अरे नालायक, सब जूठा कर डाला...' कहता हुआ वह सारा शील-संकोच छोड़ तेज़ी से बढ़ा और साफ़-सुथरे कपड़े पहने, केले के गूदे से सने हाथ और दालमोठ लगे मुँहवाले छुन्नू के कान ज़ोर से पकड़ लिये।

लड़का चीख रहा था, 'तो अम्माँ ने ई तो कहा था कि वो अब नई आयेंगे..।'

पर सुखवीर सब कुछ भूल कर उसके गालों पर चाँटे लगाये जा रहा था, इस ओर हतबुद्ध अवाक् खड़े मुझे लग रहा था कि वे छुन्नू के नहीं मेरे गालों पर तड़ातड़ पड़ रहे हैं। ◆◆◆

Hindi Pracharini Sabha & Hindi Chetna
proudly present

for the third time

हास्य कवि सम्मेलन
Hasya Kavi Sammelan

featuring eminent poets from India

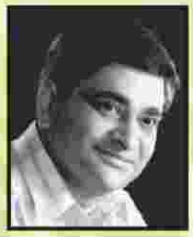

अरुण जैमिनी

महेन्द्र अजनबी

आश करण अटल

Friday, April 23, 2010

LOCATION:
Delta Toronto East
(Kennedy and 401 East)
2035 Kennedy Road
Scarborough, Ontario
M1T 3G2
Telephone: 416-299-1500

PROGRAM:
Reception
and light refreshments:
6.30 - 7.45 PM
Kavi Sammelam 8.00 PM

TICKETS:
$25.00 per person
For tickets and information, please contact:
905-475-7165

FREE PARKING*

*Upon arrival, please present your license plate number at the hotel reception

Non-Stop Laughter
Rip-Roaring Humor
Heart-Warming Recitals

Hasya Kavi Sammelan

Sponsored by: International Hindi Association USA
Promoted by: Vishwa Hindu Parishad of Ontario, Punjabi Lehran, World Brahman Federation, Canada and Hindi Abroad

Maharani Fashions

- Ladies Designer Suits
- Sarees
- Salwar Kameez
- Men's Suiting
- Imitation Jewellery

An Exciting Collection of The
Latest in Festive Fashions!!!

1417 Gerrard Street East, Toronto,
Ontario M4L 1Z7
Tel: 416-466-8400

खुल जा सिमसिम

सुषम बेदी, अमेरिका

भोर का उजाला ज्यों ही उसकी बंद पलकों पर हल्के से कदम रखता है कि वह मिचमिचाती आँखों से सिरहाने पड़े रिमोट कंट्रोल के पावर बटन को दबा देती है और अनायास उसके मुँह से फूटता है- ''लैट्स सी वट आर द हैडलाईन्स।''

रात को भी वह खबरें देखकर ही सोयी थी। तब भी देर शाम काम से वापिस पहुँची तो यही कह कर उसने टीवी चलाया था- ''खुदा जाने दिन भर में क्या हो गया होगा!''

यूँ विशेष कुछ हुआ नहीं था सिवाय इसके कि उस दिन की खास खबरों में एयरलाइन के कर्मचारियों की हड़ताल के बारे में और उस वजह से हवाई अड्डे पर यात्रियों को हुई असुविधाओं की चर्चा थी। यूँ यह खबर कई दिनों से लगातार दिखायी जा रही थी। जब तक कि कोई और बड़ी खबर न हो यही या एक दो और स्थानीय छोटी खबरों से सारे अखबार और टीवी चैनल भरे थे। यूँ रोज-रोज तो कोई बहुत बड़ी खबर होती भी नहीं। बड़ी-बड़ी बातें तो कभी-कभार ही घटती हैं।

जब घट ही जाती हैं तो फिर मोड़ी नहीं जा सकतीं। बहुत दूर तक, बहुत देर तक रहता है उनका असर।

पर मन तो हटता नहीं न। जैसे कि इच्छा के दम से ही मोड़ना मुमकिन हो। पर क्या सचमुच कभी होता है ऐसा?

क्या किसी बड़ी खबर का इंतजार था उसे? कभी घटेगी वह? या कि उस घटना की एक धुंधली अस्पष्ट-सी कोई चाह थी अवचेतन में।

या सिर्फ राहत मिलती थी उसे खबरों की दुनिया में खो जाने में। सचमुच के लोगों में सचमुच के लोगों के साथ घटी सच्ची बातों में। दूसरों की दुनिया उसे जज्ब कर लेती। अपनी दुनिया के घेरे के बाहर। दूर... दूर...।

पर अपनी कोई दुनिया है ही कहाँ? कभी थी।

क्या सचमुच थी या सिर्फ भुलेखा था।

भुलेखा भी ऐसा कि जिसकी हल्की-सी याद भी नश्तर की तरह छाती में जा घुपे।

यूँ उसे देश-विदेश हर जगह की खबरों में दिलचस्पी रहती थी। दिलचस्पी थी या आदत थी।

खबरें जानने की, कहा नहीं जा सकता। या उस अकेले सूने घर में समाचारवाचक और बाहरी दुनिया का घटनाचक्र कुछ हरकत, कुछ कोलाहल पैदा कर देता था जो रेवा को महसूस करा देता कि वह अभी भी मौजूद है, जिंदा है। या यह उसके भीतर की ही कोई बेचैनी थी जिससे निबटने के लिये रिमोट कंट्रोल पर हाथ पहुँच जाता। बटन दब जाते और परदे पर तस्वीरें और आवाजें उस बेचैनी को अपने घोल में डुबोने को तत्पर हो जाते।

क्या कभी मुक्त होगी इस बेचैनी से? इस चीखते अंगारों जैसे भीतरी कोलाहल से?

या शायद यह उसके लिये उसी तरह से था जैसे रोज समय पर नाश्ता करना या नहाना या ब्रश करना। जैसे बिना ब्रश किये वह नाश्ता नहीं खा सकती थी उसी तरह बिन खबरें देखे वह नहाने नहीं जा सकती थी या बिना अखबार पढ़े वह टूथब्रश नहीं कर सकती थी।

वैसे यह सिलसिला कुछेक सालों से ही शुरू हुआ। पहले ऐसा कुछ नहीं था। पहले सुबह सात बजे उसे स्कूल भागना होता था। अनु को तैयार करके जाना होता था, अविनाश और अनु का नाश्ता और दोपहर का खाना तैयार करके जाना होता था। कुछ शाम के खाने का इंतजाम भी करना पड़ता था कि कहीं देर हो जाये तो कुछ न कुछ तो रहे, अधूरा सा ही तैयार, जिसे जल्दी से खाने की मेज पर पेश किया जा सके।

पाँच बजे उठती तो भी वक्त कम रहता। बस भागा दौड़ी।

गाड़ी भी तो घर में वही चलाती थी। कभी अविनाश को कहीं छोड़ना होता तो कभी अनु को।

आज हेयर ड्रेसर से अपायंटमेंट है अनु की तो आज डॉक्टर से। आज सहेलियों के साथ स्केटिंग करने जाने है तो आज लाहौरी पर कबाब खाने जाना है। यूँ सहेलियों के साथ अनु ज्यादा जाती नहीं थी। ज्यादातर बाप-बेटी के प्रोग्राम साथ ही बनते। उसे हैरानी भी होती। न तो अनु किसी सहेली के घर आया-जाया करती न अपने ही घर बुलाती। अनु ने उससे पूछा भी था- ''क्या तेरी कोई सहेली नहीं जिसके साथ...।''

तो पटाक से जवाब मिला था- ''नो आइ हेट दीज इंग्लिश गर्ल्स।''

''आई थिंक दे आर परफैक्टली वंडरफुल पीपल। वाय शुड यू हेट देम? दैट इज नाट नाईस?'' उसने अनु से अचरज से पूछा था। पर अनु और भी भड़क गयी- ''वैल आइ हेट दैम? हू आर यू टू स्टाप मी।'' और अविनाश बीच में टपक पड़ा था- ''तुम्हारी अपनी दास मनोवृत्ति है तभी उससे ऐसा कह रही हो? वर्ना इसमें आपत्तिजनक क्या है? मुझे खुद यह कौम पसंद नहीं। साले बरसों हम पे राज कर गये और अब अपने मुल्क में भी हमें दास बना कर रखना चाहते हैं... चूतिया कहीं के... अब गया इनका जमाना।''

फिर यह भी जोड़ा था- ''किस तरह की माँ हो तुम? अपनी बेटी को समझने की तनिक भी कोशिश नहीं करतीं।''

रेवा चिढ़कर बोली थी- ''तुमने तो वह कमी पूरी कर दी है?''

यह सच था अनु जो भी कहती अविनाश आँख बंद करके मान लेता था। रेवा की नजर में वह चाहे कितनी ही गलत बात हो। अविनाश कभी भी उसे बेटी को रोकने नहीं देता था। यही वजह था कि अनु ने स्कूल के बाद साल आफ लेना चाहा और वह मान गया। रेवा बिल्कुल नहीं चाहती थी कि पढ़ाई में ब्रेक डाला जाये। उसे लगता था कि एक बार पढ़ाई छूटी तो बच्चे पर वैसा दबाव नहीं रहता और मजे मारने की लत-सी पड़ जाती है। उसकी अपनी मौसी की लड़की के साथ यही तो हुआ था, एक बार बी.ए. वगैरह खत्म हो जाये तब तो ब्रेक डाल भी दो क्योंकि बच्चे तब तक कुछ परिपक्व हो जाते हैं। अपना भला-बुरा समझने लगते हैं। पर स्कूल की उम्र में ही उनको ढील देने लगो तो क्या पता बुरी आदतों में फंस जायें।

पर जब रेवा ने नियम-अनुशासन बनाये रखने की बात की तो अनु ने गुस्से से कहा था- ''माम तो मुझे हमेशा डिसिप्लिन करने में ही लगी रहती हैं। आय ऐम नाट सपोज्ड टू हैव ऐ हार्ट आर फीलिंग्स।''

और अविनाश समझाने लगा था उल्टे रेवा को- ''सबको एक ही खांचे में रखकर ढालना सही नजरिया नहीं है। तुम्हारी बेटी अलग तरह की है। उसके व्यक्तित्व को समझने की कोशिश करो। जो सब करते हैं वही वह क्यों करे? क्या उसकी अपनी कोई शख्सियत नहीं।''

भीतर भी भीतर बाप-बेटी के बीच क्या कुछ पक रहा है इसका भला ख्याल भी कैसे हो सकता था। बस इतना ही देख पाती कि सचमुच दोनों एक-दूसरे को कहीं बहुत अच्छी तरह समझते जानते थे और बहुत सहजता से एक-दूसरे की बात से सहमत हो जाते जबकि रेवा की बात हमेशा उलट पड़ जाती। जिस तरह की सहमति वह अविनाश के साथ पति-पत्नी के रूप में चाहती थी वह सब उससे दूर ही होता जा रहा था। जबकि दोनों ने जब विवाह का फैसला किया तब रेवा को कतई यह महसूस नहीं हुआ था कि अविनाश और उसके बीच कम्पैटेबिलिटी नहीं है। यह सच है कि रेवा ने बड़ी उम्र में शादी की और अविनाश उससे उम्र में तीनेक साल छोटा था पर दोनों में प्यार था, दोनों जिन्दगी को बहुत कुछ एक ही ढंग से देखते-समझते थे। एक तरह का संतुलन था दोनों के जीवन में। उसे पता ही नहीं लगा कि क्या कब गलत हुआ। अचानक जब रिटायरमेंट लेकर वह पूरी तरह से घर की हुई तो घर का नक्शा ही उलटा हुआ था। अपने ही घर में वह अजनबी की तरह देखी जा रही थी।

रेवा की नहीं चली थी। बाप ने साथ दिया तो बेटी क्यों कर उसका कहना मानती? पता नहीं अविनाश इस बात के लिये खुद को जिम्मेवार मानता था कि नहीं और इसे खुदा जाने इस बात का अफसोस भी था या नहीं कि अनु ने कालेज शुरू करके भी खत्म नहीं किया। नौकरी की छोटी-मोटी तो वह भी छोड़ दी।

क्या होगा अनु का? यह सोचकर भी घबराहट होने लगती रेवा को पर अविनाश बड़े आराम से कह देता- ''नौकरी का क्या है? स्कूल पास को ज्यादा अच्छी नौकरियाँ मिल रही हैं। क्या पढ़ाई से ही सब कुछ हो जाता है? अच्छा इंसान बनने के लिये सिर्फ पढ़ाई ही जरूरी नहीं। हमने क्या पा लिया इतना-इतना पढ़ के। मुझसे कहीं कम पढ़े कहीं ज्यादा कमा रहे हैं। उल्टे दिमाग खराब हो जाता है पढ़ाई करके। न आदमी कोई और नौकरी कर सकता है। दिमाग आसमान पर चढ़ा रहता है। अच्छी वाईट कालर जाब देता ही कौन है हमें। इतना स्ट्रग्ल करो तब जाके मिलती है नौकरी। मिल जाये तो उसे बनाये रखने के लिये जिन्दगी दाव पर लगा दो। मुझे नहीं चाहिये ऐसी नौकरी। न मेरी बेटी को। हम लोग इंसानों की तरह जीना चाहते हैं। मशीनों की तरह नहीं।''

रेवा तो सचमुच मशीन की तरह ही जी रही थी। सुबह से शाम तक अंतहीन काम। पैसा भी वही कमाती और घर को भी वही संवारती।

अविनाश की नौकरी एक बार छूट गयी तो बस...। ऐसा निराश, सनकी और घुन्ना सा हो गया कि रेवा समझ ही नहीं पाती थी कि क्या करे। दिन भर घर पर रहता। कहने को बेटी को वक्त देता था। उसे पालता था। पर पता नहीं कैसा पालता था। घर की सफाई, खाने का काम, ज्यों का त्यों पड़ा रहता जो रेवा को घर आकर संभालना पड़ता। कुछ कहे तो लड़ाई। बेटी भी बाप का साथ देने लगती तो रेवा चुप कर जाती। हैरान भी होती कि कैसे इतना बस में कर लिया बेटी को वह बाप की ही होती जा रही थी। माँ जैसे कोई चीज ही नहीं।

छोटी थी तो माँ के साथ ही चिपकी रहती थी। रेवा ने कुछ साल काम से अवकाश ले लिया था और पूरा वक्त उसी को देती। ये तो जब अविनाश की नौकरी गयी तो रेवा को दो-दो नौकरियाँ करनी पड़ गयीं। वह पूरा दिन ही बाहर रहती। अविनाश जो थोड़ा बहुत कमाई कर सकता था, उसने कहा कि वह घर से ही करेगा। अनु के इर्द-गिर्द भी तो किसी को होना था। तब आठ साल की रही होगी। स्कूल से लाना ले जाना हर तरह से बच्ची की देखभाल। बाप-बेटी तब दोनों घर पर अकेले होते थे। पर अनु दिन भर तो स्कूल की होती थी। उसे कभी सपने में

वह अपने कमरे में कपड़ों की आलमारी ठीक-ठाक कर रही थी कि रसोईघर से उसे जोर की खिलखिलाहटें सुन पड़ीं। लगा जैसे कोई लुकाछिपी जैसा खेल खेला जा रहा था बाप-बेटी के बीच। ''खुल जा सिम सिम'' ''खुल जा सिमसिम'' की आवाज बार-बार आती। इसी टुकड़े को धुन की तरह दुहराते हुये कोई खिलवाड़ चल रहा था।

भी अनुमान नहीं हुआ था कि बाप-बेटी के बीच कुछ ऐसा-वैसा भी हो सकता था और शायद पता चलता भी न अगर वह पहले बीमार और फिर जल्दी रिटायर न होती तो। उसे याद है अनु करीब सोलह-सत्रह की रही होगी। कोई इतवार था। वह अपने कमरे में कपड़ों की आलमारी ठीक-ठाक कर रही थी कि रसोईघर से उसे जोर की खिलखिलाहटें सुन पड़ीं। लगा जैसे कोई लुकाछिपी जैसा खेल खेला जा रहा था बाप-बेटी के बीच। ''खुल जा सिम सिम'' ''खुल जा सिमसिम'' की आवाज बार-बार आती। इसी टुकड़े को धुन की तरह दुहराते हुये कोई खिलवाड़ चल रहा था। वह उत्सुक-सी जैसे खेल में शामिल होने के लिये बाहर निकल आयी तो देखा अनु नहाकर बाप के सामने तौलिया लपेटकर आ बैठी थी और खुलते-गिरते तौलिये को लपेटने की कोशिश कर रही थी। वह चौंकी। पल भर को दोनों ने उसकी ओर ताका फिर अवमानना और बेरुखे तरीके से अपनी बातों में लग गये। यूँ ऐसा अक्सर देखा था उसने... देर तक रसोई में बैठ दोनों चाय पीते, गप्प मारते। रेवा को अजीब लगा था। बाप के सामने इस तरह अधनंग होकर बैठना। पर इन ''खुल जा सिमसिम'' की गूँजों ने अजीब-सा शक पैदा कर दिया था उसमें। जैसे कुछ देखते हुये भी अनदेखा कर रही हो वह। वह चिल्लायी थी- ''अनु पहले तैयार हो जा फिर पापा के साथ गप्प मारना।'' पर पहले अविनाश और बाद में अनु उसे झिड़कने लगे। अनु बोली- ''दैन वाट ही इज माई फादर और मैं कोई नंगी थोड़ी न हूँ। होऊं भी तो ऐसा क्या बात है... मेरे पापा ही तो हैं।'' कहकर उसने प्यार और शरारत भरी निगाह पापा पर डाली और अविनाश ने दांत-निकली मुस्कान फेंक उसका अभिनंदन किया था।

नजरों के उस अदलाब-बदलाव में क्या भांपा था रेवा ने कि उसकी रूह कांप गयी। फिर सब कुछ अनदेखा कर खुद से कहा था कि उस की गलतफहमी है। किसी से कभी जिक्र नहीं किया इस बात का।

साल बाद तो उसने रिटायरमेंट ही ले ली थी। पर तब तक शायद देर हो चुकी थी। अब भी रेवा को समझ नहीं आता था कि वह कैसे इस बात को उठाये। उसे अपने पर संदेह भी होता और अविश्वास भी। कभी लगता कि वह खुद ही पागल होती जा रही है जो इस तरह की बात सोच बैठी है।

वह घर में रहने लगी तो उम्मीद कर रही थी कि अविनाश अब बाहर की नौकरी ले लेगा और वह खुद बेटी के आसपास होगी। बेटी की देखभाल करेगी और उसकी पढ़ाई भी पूरी करवा देगी।

फोटो : उमेश ताम्बी, फिलाडेल्फिया

अनु बोली- ''दैन वाट ही इज माई फादर और मैं कोई नंगी थोड़ी न हूँ। होऊं भी तो ऐसा क्या बात है... मेरे पापा ही तो हैं।'' कहकर उसने प्यार और शरारत भरी निगाह पापा पर डाली।

आखिर तब अनु अठारह साल की हो चुकी थी और कालेज की पढ़ाई का जोर था। पर घर का तो अजीब ही रवैया था। दोनों देर सबेरे उठकर एक-दूसरे से गप्प मारते, टीवी देखते, फिल्मों पर बात करते और उम्मीद करते कि रेवा तैयार करके सब कुछ मेज पर धरती जायेगी। फिर जब मन होता अनु स्कूल ही न जाती। कह देती आज कोई खास क्लास नहीं। या कि उसकी तबियत खराब थी। या लेट चली जाऊँगी।

वह गुस्सा करके कहती, ''क्या घर में बैठी-बैठी मोटी होती जा रही है।'' तो पलट कर जवाब मिलता, ''तुमसे कम मोटी हूँ। वाय आर यू आलवेज कन्डैमिंग मी।''

बाप-बेटी साथ-साथ ही लगे रहते। दोनों के बीच अजीब सांठगांठ थी कि वह बार-बार अकेली पड़ जाती जैसे कि वह सौतेली माँ और सौतेली ही पत्नी हो।

घरेलू तनाव किसी गैस भरे गुब्बारे की तरह बस ऊपर ही चढ़ते जा रहे थे। हर छोटी बात लड़ाई की वजह बन जाती।

इधर रिटायर हुई उधर घर महाभारत का मैदान बन गया था। कई बार तो दोनों पूरी-पूरी रात ही गायब हो जाते। कभी अविनाश अनु को साथ ले तीन-तीन दिन के लिये चला जाता और उसे यह कह जाता कि अनु को नौकरी के इंटरव्यू पर ले जाना था। अनु को कभी ये वाली नौकरियाँ मिली नहीं। न ही उसे विस्तार से कुछ बताया जाता। सब कुछ गोल-गोल घुमा के। एक बार उसने खुद साथ चलने की बात की थी तो कहा गया कि तबियत खराब रहती है तो क्यों सफर में खुद को हलाक करेगी। बाप किसलिये है

पैसे उसी से मांगे जाते। इंकार करती तो बेटी भी धिक्कारती और बाप भी।

पता नहीं कब, कैसे हो गया यह सब। लगता कि बस सब कुछ एक साथ ही हो गया जैसे।

अनभिव्यक्त गुस्सा, संदेह, रोष और क्षोभ की ज्वालाओं में रेवा का भीतर कुछ इस तरह सूखता जा रहा था जैसे मरुस्थल को सूरज के ताप ने और भी दहका दिया हो।

मन ही मन गालियाँ भी बकती- ''पशु!

सर्वनाश हो तुम्हारा। अपने ही खून पर हमला। सांप कहीं का। अपने ही अंडे को निगल गया।''

''साले की राक्षसी भूख है... खा-खा कर डकार मारता है फिर भी भूख मरती नहीं।'' कभी कह नहीं पायी थी। सिर्फ हलक में ही जमे रहे थे वाक्य।

इतना... इतना बरदाश्त के बाहर कि तलाक की नौबत...।

यूँ तलाक उसने मांगा तो खुद ही था।

पर न मांगती तो भी करती क्या? वह खुद एक काम करके दूसरों का पेट भरने, पालन-पोसन करने वाली मशीन भर ही तो बनके रह गयी थी।

लेकिन बेटी इस हद तक जा सकती है... अपनी पेट की जनी ही अपनी दुश्मन बन सकती है? जैसे दूध नहीं... विष पिलाकर वह कोई विषकन्या पाल रही थी। रोज माँ के लिये कोई न कोई नया विशेषण खोज लाती- ''सेल्फिश वुमन'', ''मनीमान्गर'', ''ओल्डवुमन'', ''स्टुपिड'', ''स्नीकी''। जो भी विशेषण बाप से सुनती वह अगले दिन बेटी की जुबान पर होता। और अब अनु की कोर्ट में उसके खिलाफ गवाही...।

रेवा को विश्वास ही नहीं होता कि यह उसी की बेटी थी... वही बेटी जो उसके पेट से निकली थी... जिसे उसने इतनी तकलीफें सह कर जना, पाला-पोसा। वही बेटी...।

क्या सचमुच उसमें रेवा का खून नहीं बह रहा, सिर्फ अविनाश का ही वह रहा था? सिर्फ अविनाश की ही बेटी थी वह।

कोर्ट में तो उसने साबित कर ही दिया कि वह जो भी थी उसी की थी- ''माँ सारा-सारा दिन घर से बाहर रहती थी। उसे बेटी के बजाय काम से ज्यादा प्यार था। बेटी को बाप ने ही अपने हाथों से पाला है।'' अविनाश के वकील ने अदालत में कहा था।

क्या ऐसा भी होता है कि बेटी सिर्फ पिता की हो... माँ का ऐसा नकार...? भरण-पोषण करने वाली माँ... वह माँ जो बाप की भूमिका भी अदा करती रही।

लेकिन क्यों?

वह बार-बार पीछे मुड़ जाती है और हिसाब-किताब करने लगती है कि ऐसा हुआ कैसे! बेटी नहीं। वह है रेवा की सौत... लेकिन कब कैसे बन गय वह सौत...? जब वह दिन भर खटती थी और बेकार पति बेटी को उसकी अनुपस्थिति में पाल रहा

फोटो : उमेश ताम्बी, फिलाडेल्फिया

था... ओह क्या कुछ किया होगा इस जानवर ने इस लड़की के साथ... इतना कि वह लड़की यह भी नहीं समझती कि जिसे वह अपना सब कुछ मान रही है वही उसका असली दुश्मन है... आस्तीन का सांप... सांप की भी कोई नीच से नीच जात... जो डसे और पता भी न लगे कि विष फैल रहा है...।

कैसी-कैसी तो झूठी बातें कही थीं अविनाश ने अदालत में- ''इसने मुझसे सिर्फ इसलिये शादी की कि यह बच्चा पैदा कर सके कि परदेश में कोई अपना कहने वाला हो। वर्ना सिवाय गलती से इस बच्ची को पैदा करने के इसके पास मुझसे किसी तरह का भी जिस्मानी रिश्ता रखने की फुरसत या दिलचस्पी ही कहाँ थी। न इसे कभी मेरे लिये वक्त था, न इस बच्ची के लिये।''

और इस झूठ को साबित करने के लिये गवाही दिलवायी गयी उस बच्ची की कि वह बचपन से, चार साल की थी तब से, यह सब सुनती रही थी- इस बात को लेकर माँ-बाप के वाद-प्रतिवाद। यहाँ तक कि माँ ने उससे एक दिन कहा कि उसी के गर्भ के बहाने से वह अविनाश से शादी के लिये राजी...! माँ की सेक्स में कोई दिलचस्पी नहीं थी पर अविनाश से शादी करके वह बच्चा जनने का अनुभव चाहती थी।

और साथ में यह भी जोड़ दिया गया था- ''बच्चा जनने का, पालने का नहीं।''

ओह कितना बड़ा झूठ। उसी की बेटी के मुँह से...।

कौन माँ होगी जो अपने बच्चे से इस तरह बात करेगी।

और यह कैसा कानून है जो यह मान लेता है कि माँ इस तरह बात करती होगी।

पर अदालत तो सुबूत मांगती है। कहाँ से दे सुबूत कि उसने बच्ची को कभी कुछ नहीं कहा। पता नहीं पिता ने उसे क्या समझाया, कहा। वह बच्ची... लेकिन बच्ची कहाँ अब तो बाईस साल की जवान लड़की हो चली है। तभी तो अदालत उसके कहे को पत्थर की लकीर मान बैठी है... और रेवा को एक लापरवाह, हृदयहीन माँ... जब अपनी बेटी ही अपने मुँह से अपनी माँ को दुत्कारे तो किस अदालत से क्या कहें?

एकाध बार उसने अनु को ही कुरेदने की

दोनों के बीच का फासला किसी अंतहीन छोर सा हो गया। घर पर साथ रहना इतना मुश्किल होता गया कि रेवा को तलाक के सिवा और कोई रास्ता नहीं सूझा था। जानती थी बच्ची की कस्टडी का तो कोई सवाल ही नहीं था। पर अनु से अलग रहना होगा... चाहे जितनी भी गाली-गलौज हो... बेटी का पास होना अहम था... बाप-बेटी का खर्चा भी उसी के माथे मढ़ा जायेगा पर जज को समझाना चाहती थी कि बेटी की रक्षा के लिये उसे बाप से बचाना है। पर कैसे...

कोशिश की थी और अनु भभक पड़ी थी- ''हाउडेयर यू से एनीथिंग अगेंस्ट माई फादर ? वट काईंड आफ वुमन यू आर। नो बंडर डैड डस नाट लाईक यू।''

''डोंट टाक टू मी लाइक देट'' और रेवा ने तड़ाक से अनु के मुँह पर तमाचा जड़ा था। अनु ने भी तब और भी जलती हुई गालियाँ बकी थीं- ''डिसगसटिंग वुमन। स्लट। आई हेट यू। आई विश यू वट नाट माई मदर। आई प्रे यू वर डैड।'' और उलट कर माँ पर वार किया था। रेवा जैसे पागल हो गयी थी। अनु को मारते-मारते उसके पहले से ही कमजोर हाथ दुखने लग गये थे- ''यही सब सीखी है तू। माँ को गालियाँ देना। माँ पर वार करना। यही सिखाया है तेरे बाप ने। यही कुछ किया है तूने स्कूल में। कौन सी घड़ी मैंने तुझे पैदा किया... खबरदार जो कल से मुझे घर दिखी। सही तरीके से अपना कालेज जा और कुछ पढ़-लिख। जानवरों की तरह बस खाया-पिया और हगा। लिव लाईक ए हयूमन बिइंग।''

''यू आर ऐनिमल'', ''यू शुड डाई'', ''यू डोंट लव मी'', ''यू हेट मी'', ''यू आर जैलस बीकाज डेड लव्स मी'', ''यू आर सेलफिश।''

पता नहीं क्या-क्या बकती रही थी अनु।

अनु ज्यों-ज्यों बड़ी होती जा रही थी उसका मिजाज बिगड़ता ही जा रहा था और वह माँ को ही हर बात पर डांट लगाती। यहाँ तक कि रेवा उसे कुछ कहने से ही घबराने लगी थी और माँ-बेटी के बीच संप्रेषण लगभग खत्म होता जा रहा था।

देखते ही देखते दोनों के बीच का फासला किसी अंतहीन छोर सा हो गया। घर पर साथ रहना इतना मुश्किल होता गया कि रेवा को तलाक के सिवा और कोई रास्ता नहीं सूझा था। जानती थी बच्ची की कस्टडी का तो कोई सवाल ही नहीं था। पर अनु से अलग रहना होगा... चाहे जितनी भी गाली-गलौज हो... बेटी का पास होना अहम था... बाप-बेटी का खर्चा भी उसी के माथे मढ़ा जायेगा पर जज को समझाना चाहती थी कि बेटी की रक्षा के लिये उसे बाप से बचाना है। पर कैसे... वह कैसे समझायेगी। अपने ही घर की गंदगी बाहर कैसे उछालेगी।

सुबूत चाहिये न... सुबूत कहाँ से लायेगी वह...।

इससे पहले कि बेटी यह सब समझे... सब कुछ हो चुका होगा... बहुत देर हो चुकी होगी... पर उसकी बेटी... रेवा के भीतर जैसे किसी ने हल चला दिया हो... कहाँ जाये इस दर्द को लेकर... क्या करे... उसे लगता जैसे कोई उसके जिंदा होशहवास में उसका गला दबाता जा रहा हो और वह चीख तक न पाती हो...।

बस सिवा इसके कि एक प्रतीक्षा कि बेटी एक दिन समझ जायेगी... बाप ने किस-किस तरह से उसका फायदा उठाया है... माँ-बेटी दोनों का ही... रेवा जैसे किसी चमत्कार का इंतजार कर रही है... हाँ चमत्कार ही... वर्ना कैसे... और खुलजा सिमसिम... खुलजा सिमसिम के वाक्य उसके कानों में गरम सीसे की तरह घुलने लगते हैं। उसके शरीर पर किसी घिनौने कीड़े की तरह रेंगने लगते हैं।

ओह कैसे होगा इस सबसे निस्तार ? क्या कभी बच पायेगी उसकी अनु ? कभी होगा यह मुमकिन ?

वह लाचार उम्मीद करती रहती है... एक दिन... शायद सब खुल जायेगा... सब सच खुल जायेगा बेटी के सामने और वह माँ के पास दौड़ती हुई आयेगी... खुद चिपटायेगी माँ को गले से... उसकी प्यारी, चहेती इकलौती बेटी... बस एक वही तो है उसकी इस सारे जहान में... इस अकेली परदेसी दुनिया में... वही तो केन्द्र थी उसके प्यार का... उसकी दुनिया का... कैसे देखते-देखते फिसल गया वह केन्द्र ही... अब कैसे टिकेगी वह... जमीन नहीं रही, जहाँ वह खड़ी थी...।

बस... और वह कल्पना की दुनिया में खो जाती है... एक दरबार जैसा कमरा खुलता है जहाँ बीचोंबीच सिंहासन पर उसकी बेटी बैठी है... वह आवाज लगाती है... अनुऽऽऽऽऽ... अनु माँ पर नजर पड़ते ही सिंहासन से उतर पड़ती है और दौड़ती हुई आती है माँ की ओर... लेकिन माँ तक पहुँचने से पहले ही एक भयंकर, अंधकार को लपेटे कोई दैत्य सी आकृति अपहरण कर लेती है उसकी बेटी का... चिल्ला रही है रेवा... उसे छुड़ाओ... कोई छुड़ाओ...।

पर उस सूने कमरे में सिर्फ उसकी अपनी आवाज थी... या बार-बार टीवी के परदे पर बदलते समाचार बिंब, समाचार वाचकों की सधी आवाजें।

कैसी दुनिया से घिरी है वह... जहाँ बहुत कुछ हो सकता है... बहुत कुछ होता है... बटन दबाने से बहुत सी चाहतें पूरी हो जाती हैं... शायद ऐसे ही...।

थक गयी है... टूट गयी है लड़ते-लड़ते। हार चुकी है केस... हार चुकी है बेटी...! क्या बीते को लौटने का, हुए को अनहुआ करने का भी कोई आविष्कार हो सकता है... ?

...बेटी उससे और भी दूर, और भी परायी होती जायेगी... और रेवा... अचानक तेजी से वह रिमोट कंट्रोल के बटन दबाती चली जाती है... परदे पर तस्वीरें अलग-अलग चैनल को फांदने लगती हैं। रेवा चिल्लाने लगती है- न्यूज... न्यूज... सात बजे वाली न्यूज तो मिस हो गयी... और उसे लगता है जैसे कुछ होना था... जो हुआ नहीं... या कुछ खोज रही थी... जो मिला नहीं... या शायद अभी इंतजार... जारी है... ? ◆◆◆

व्यंग्य

अथ अति उत्तर आधुनिक नायिका वर्णन

◆ प्रेम जनमेजय, भारत

हिन्दी साहित्य में एक काल का वर्णन आता है जिसे विद्वानों ने रीतिकाल की संज्ञा से विभूषित किया है। मेरे इस वाक्य को पढ़ते ही उत्तर आधुनिक सोच के इंटलैक्चुअल धिक्कार, मक्कार और तिरस्कार दृष्टि के साथ धुकयाते हुये कहेंगे- बास्टर्ड मास्टर, रीतिकाल से आगे बढ़ते ही नहीं, साले अध्यापकीय शैली के लोग। पर मित्रों, रीतिकाल में जितना नारी-विमर्श हुआ है उतना तो उत्तर आधुनिक युग में भी नहीं हुआ है। क्या क्रांतिकारी कवि थे, राधा-कृष्ण के वो वो सीन पेश किये कि वात्सायन शरमा गये, कामसूत्र का दूसरा परिवर्द्धित संस्करण लिखने की सोचने लगे। किसी बजरंग दल या सेना की हिम्मत नहीं हुई कि जेबी-सा, दिखावटी ही सही, आंदोलन कर सकें। किसी ने ज्यादा कहा तो उसे... बनाते हुये कहा- राधिका कन्हाईके सुमिरनकौ बहानौ है। कई कवियों की कविताई तो राजा-महाराजाओं के लिये वियाग्रा का काम करती थी- है आज के नारी विमर्श में ऐसी ताकत।

रीतिकाल और अति आधुनिक काल में बहुत समानताएँ हैं। आज यदि नारी-विमर्श का बोलबाला है तो रीतिकाल में नायिका-विमर्श का बोलबाला था। रीतिकालीन कवि कोई पत्रिका नहीं निकालते थे फिर भी इतना विशाल नारी-विमर्श। देखा है किसी आधुनिक नारी-विमर्श चिंतक ने नारी को इतने रूपों में? किसी ने इस तरह का कुछ लिखा है- 'केलि की रात अघाने नहीं, दिन में ही लला पुनि घात लगायो'। धिक्कार है हमारे उत्तर आधुनिक बोध पर।

रीतिकालीन राज दरबारों में चारण भाट 'गुणी' आश्रयदाता की वंदना करते और अशरफी पाते, आजकल चरण-वंदना करते हैं और पुरस्कार-सम्मान पाते हैं। पुरस्कार-सम्मान देने की नहीं लेने की वस्तु हो गये हैं। दरबार सजे हुये हैं, चारण-भाट काम पर लगे हुये हैं। हिन्दी का अति उत्तर रीतिकाल अपने यौवन पर इतरा रहा है।

मुझे तो रीतिकाल की सारी नायिकाएँ इस अति उत्तर आधुनिक काल में दिखाई देती हैं। नायिकाओं की इतनी भीड़ है कि नायक दिल्ली की गलियों की तरह कहीं गायब हो गया है। और जो नायक दिखाई भी दे रहे हैं वो नायक ऐसे हैं कि उन्हें देख नायिकाओं का भ्रम होता है। नायकों के लिये धीरोदात्त, धीरललित, धीरप्रशांत, धीरोद्धात जैसे पुरुषोचित नाम दिये गये हैं जो बहुत ही कठोर लगते हैं जबकि साहित्य के उत्तर आधुनिक नायक स्वर में चाहे कठोर हों पर दिल से बहुत ही कोमल हैं। इनमें नायिकाओं के समस्त गुण कूट-कूट कर भरे हैं। मैं प्रेम जनमेजय कुछ अति उत्तर आधुनिक नायिकाओं का वर्णन करता हूँ, सुंदरकांड पाठ की तरह ध्यान से सुन राजन् वरना तेरा सर टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा तथा अति उत्तर आधुनिकता की छोड़, तू अति दक्षिण आधुनिक भी नहीं रहेगा। अथ अति उत्तर आधुनिक नायिका वर्णन प्रारंभ :

पद्मिनी नायिका– ये नायिकाएँ, चाहे कीचड़नुमा गोष्ठी हो अथवा चंदनघिसनुमा गोष्ठी, उसमें कमल के समान ही खिलती हैं। इनके शरीर से निरंतर एक गंध प्रवाहित होती रहती है जो मिलने वालों को सूचित करती रहती है कि लाल, नीले, सहस्त्रदल ये कमल ही हैं जो किसी भी गोष्ठी की शोभा बनते आये हैं, बन रहे हैं और बनते रहेंगे तथा यदि मुख्यधारा में इनका कीचड़ बन रहना है तो इनकी गंध को ग्रहण कर। ये कमल प्रतिक्षण अध्यक्षता की गंध से गंधाते रहते हैं। इनके वायु विसर्जन को भी इनके भक्त पद्मगंध मानकर स्वीकार करते हैं। बिना कीचड़ के राजनीतिक क्या, साहित्यिक कमल तक का कोई महत्व नहीं है। कीचड़ है तो कमल है, कमल है तो कीचड़ है। चंदन है तो प्रभु हैं, प्रभु है तो चंदन है। पद्मिनी है तो आशिक हैं, आशिक हैं तो पद्मिनी है।

स्वीकिया नायिका– ये मेरे तो गिरधर गोपाल वाली होती हैं। ये कितनी भी आधुनिक हों, किसी परपुरुष पर तो क्या किसी परनारी पर निगाह नहीं डालती हैं। कामसूत्र के अनुसार स्वकीया नायिका का महत्व नहीं है। स्वकीया (विवाहित) का वात्सायन ने नायिका की दृष्टि से विचार नहीं किया है, केवल गृहस्थ जीवन से संबंध रखने वाले कर्तव्यों की शिक्षा दी है। ऐसी स्वकीय नायिकाएँ बहुतायत में हैं जिन्हें आलोचना के 'काम' में गले तक डूबे, हिन्दी साहित्य के वात्सायन, निरंतर शिक्षा देने का प्रयत्न करते हैं पर ये मूढ़ 'काम' शिक्षा को ग्रहण ही नहीं करती हैं। बहनजी टाईप ये स्वीकिया नायिकाएँ सर झुकाये, मुख्यधारा की चिंता से रहित, अपनी लेखन-गृहस्थी में लिप्त रहती हैं। ये सुबह उठकर, नित्यकर्म से निपटती हैं और उसके बाद सारा दिन साहित्य से निपटने का नित्यकर्म करती हैं। इन्हें न तो नारी विमर्श व्याप्त है और न ही दलित विमर्श। इन्हें तो रचना उत्पादन का कर्म व्याप्ता है।

परकीया नायिका– प्राचीन साहित्य में इसका आदर्श रूप केवल राधा में देखने को मिलता है और आधुनिक साहित्य में इसका रूप कमला, बिमला, शिमला... (सूची लंबी है जिसके लिये धरती को कागज बनाना होगा) मिल रहा है। राधा विवाहिता थी और केवल श्याम में अनुरक्त थी, आधुनिक राधाएँ-शाधाएँ विवाहित हैं पर राम, श्याम, बलराम, किसी में अनुरक्त हो सकती हैं। ये शारीरिक रूप से नायिकाएँ हैं तथा मानसिक रूप से नायक। ये बहुत व्यस्त हैं। ये अभिसारिका नायिक का भी दायित्व निभाती हैं। शुक्ल पक्ष में देश में रहती हैं और कृष्ण पक्ष में विदेश में रहती हैं। इन नायिकाओं की प्रकाशन जगत में बहुत डिमांड है। ये पत्रिका के संपादकों को पारिश्रमिक एवं प्रकाशकों को रॉयल्टी देने की ताकत रखती हैं। इनकी ताकत के सामने जब संपादक और प्रकाशक नत्मस्तक हो जाते हैं तो आलोचकों की क्या औकात है।

मुग्धा नायिका– मुग्ध के अर्थ हैं स्तब्ध, विमूढ़, भ्रमित, विभ्रांत। आधुनिक हिन्दी साहित्य मुग्धा नायिकाओं की बाढ़ से आप्लावित है। एक ढूँढ़ो तो हजार मिलते हैं। ये इनके ही श्रम और रम का फल है कि गोष्ठियों का वसंत छाया रहता है और रस-रंजनमय शामें जवान होती रहती हैं। किसी पागल ने कहा होगा कि मुखड़ा क्या देखे दर्पण में परन्तु ये समझदार तो सदा दर्पण में ही देखते हुये पाये जाते हैं। इनके चारों ओर एक शीशमहल निर्मित रहता है जिनमें इन्हें अपने हजार रूप दिखाई देते हैं। इन रूपों को देखकर ये स्वयं पर मुग्ध होते रहते हैं। यदि दूसरे पर मुग्ध होने की गोष्ठी हो तो ये उस दर्पण में भी स्वयं को पिरो लेती हैं। ये किसी भी विषय से आरंभ करें, केन्द्र में स्वयं को ही रखती हैं। जैसे प्रजातंत्र में प्रजा नहीं चुनाव जीतने का मंत्र महत्वपूर्ण होता है, वैसे ही ये होती हैं। इनके भरोसे ही सौंदर्य प्रसाधनों का बाजार चलता है और इनके बल पर ही साहित्य में बुजुर्ग पीढ़ी साहित्य-साधना में रसलीन हो पाती है। इनसे अधिक बतियाने पर मधुमेह हो जाने का खतरा होता है। कोई और चाहे न इतराये ये अपने यौवन पर इतराती रहती हैं। अपने सौंदर्य के प्रशंसकों की ये सेना तैयार करती हैं तथा उसके रखरखाव के लिये पौंड और डॉलर में खर्च करने से घबराती हैं। ये अच्छी निवेशक होती हैं।

अज्ञातयौवना नायिका– मतिराम ने इनके बारे में कहा है- निज तनु यौवन आगमन जो नहिं जानती। प्रसाद ने इन्हें ही लक्षित कर कहा था- अरी, पगली संभाल आंचल, लुटती है मणिराजी। दूसरे इनका आंचल संभालते हैं, इनके यौवन पर मुग्ध होते हैं और ये अज्ञात यौवना कस्तूरी मृग-सी डोलती रहती हैं। इनके यौवन को पहचानने वाला दीदावर बरसों में पैदा होता है। ये स्वांत: सुखाय वाला कर्म करती हैं अब यदि उससे किसी और को सुख मिल जाये तो मिल जाये। ये प्रकाशक से आलंगित नहीं होती हैं, संपादकों की गोद में नहीं बैठती हैं, आलोचकों का चारण नहीं बनती हैं। इनकी संख्या बहुत कम है क्योंकि इन्हें इनके यौवन का ज्ञान देने वाले अधिक हैं।

अति आधुनिक रीतिकालीन हिन्दी साहित्य में दुतियाँ भी हैं जो यहाँ से वहाँ संदेश ले जाती हैं। ये संदेश ही नहीं ले जाती हैं अपितु स्वकीया नायिकाओं का पद्मिनी आलोचकों से मिलन करवाती हैं (चौंकिये मत कि नारी का नारी से मिलन कैसा? हुजूर यह मार्डन युग है इसमें गे और लिस्बियन पाये जाते हैं)।

रीतिकाल में बीसियों नायिकाओं का वर्णन है तथा अति आधुनिक काल में तीसियों मिलती हैं पर इन सबका वर्णन शोध-प्रबंध का विषय हो सकता है, किसी आलेख का नहीं। यदि कोई डिग्री इच्छुक इस विषय पर शोध करना चाहता हो तो सहर्ष कर ले, मैं बिना उपहार, बिना सब्जी मंगवाये उनका स्वभाव निर्मल करूँगा। ◆◆◆

Chander M. Kapur, CMA, CA

Professional Corporation
Chartered Accountant

2750 14th Avenue, Suite #201
Markham, Ontario
L3R 0B6

Tel: (905) 944-0370
Fax: (905) 944-0372
E-mail: cmkapur@rogers.com

व्यंग्य

अगले जनम मोहे बेटवा न कीजो...

◆ *समीर लाल 'समीर', कैनेडा*

> *बस प्रभु, अब सुन लो इत्ती अरज हमारी... अगले जनम में बना देईयो हमका नारी..*
>
> *कोई तो उठाओ भई मुद्दा पुरुष आरक्षण का. कौन जाने विश्वकर्मा जी के दरबार में सुनवाई न हो तो फिर पुरुष ही बन कर आ जायें.*

महिला आरक्षण, कैसा आरक्षण? मुझे तो लगता है कि आरक्षण की जरूरत पुरुषों को है.

अब जो किये हो दाता, ऐसा ना कीजो/अगले जनम मोहे बेटवा ना कीजो ऽऽऽऽ

अगले जनम मोहे बेटवा न कीजो!!

अब के कर दिये हो, चलो कोई बात नहीं. अगली बार ऐसा मत करना माई बाप. भारी नौटंकी है बेटा होना भी. यह बात तो वो ही जान सकता है जो बेटा होता है. देखो तो क्या मजे हैं बेटियों के. १८ साल की हो गई मगर अम्मा बैठा कर खोपड़ी में तेल घिस रहीं हैं, बाल काढ़ रही हैं, चुटिया बनाई जा रही है और हमारे बाल रंगरुट की तरह इत्ते छोटे कटवा दिये गये कि न कँघी फसे और न अगले चार महिने कटवाना पड़े. घर में कुछ टूटे फूटे, कोई बदमाशी हो बस हमारे मथ्थे कि इसी ने की होगी. फिर क्या, पटक-पटक कर पीटे जायें. पूछ भी नहीं सकते कि हम ही काहे पिटें हर बार? सिर्फ यही दोष है न कि बेटवा हैं, बिटिया नहीं.

बेटा होने का खामिजियाना बहुत भुगता- कोई इज्जत से बात ही नहीं करता. जा, जरा बाजार से धनिया ले आ. फलाने को बता आ. स्टेशन चला जा, चाचा आ रहे हैं, ले आ. ये सामान भारी है, तू उठा ले. हद है यार!!

जब देखो तब, सारा फेवर लड़की को. अरे बेटा, कुछ दिन तो आराम कर ले बेचारी, फिर तो पराये घर चले जाना है. उनके लिए खुद से क्रीम पावडर सब ला-लाकर रखें और वो दिन भर सजें. सिर्फ इसलिये कि कब लड़के वालों को पसंद आ जाये और उसके हाथ पीले किये जायें. हम जरा इत्र भी लगा लें तो दे ठसाई. पढ़ने-लिखने में तो दिल लगता नहीं. बस, इत्र फुलेल लगा कर शहर भर लड़कियों के पीछे आवारागर्दी करते घूमते हो. आगे से ऐसे नजर आये तो हाथ पैर तोड़ डालूंगा-जाओ पढ़ाई करो.

बिटिया को बीए करा के पढ़ाई से फुरसत और बड़े खुश कि गुड सेकेंड डिविजन पास हो गई. हम बीएससी में ७० प्रतिशत लाकर पिट रहे हैं कि नाक कटवा दी. अब बाबू के सिवा तो क्या नौकरी मिलेगी. अभी भी मौका है थोड़ा पढ़ कर काम्पटीशन में आ जाओ, जिन्दगी भर हमारी सीख याद रखोगे. पक गया मैं तो बेटा होकर.

जब कहीं पार्टी वगैरह में जाओ कोई देखने वाला नहीं. कौन देखेगा, कोई लड़की तो हैं नहीं.

- लड़का लड़की को देखे तो आवारा कहलाये और कोई लड़की देखे तो उनकी नजरें इनायत.

- लड़की चलते-चलते टकरा जाये तो मुस्कराते हुए सॉरी और हम टकरा जायें तो 'सूरदास है क्या बे! देख कर नहीं चल सकता.'

- उनके बिखरे बाल, सावन की घटा और हमारे बिखरे बाल, भिखारी लगता है कोई.

- उनके लिए हर कोई बस में जगह खाली करने को तैयार और हमें अच्छे खासे बैठे को उठा कर दस उलाहने कि जवान होकर बैठे हो और बुजुर्गों के लिए मन में कोई इज्जत है कि नहीं-कैसे संस्कार हैं तुम्हारे.

हद है भई इस दोहरी मानसिकता की. हमें तो बिटिया ही कीजो, नहीं तो ठीक नहीं होगा, बता दे रहे हैं एक जन्म पहले ही. कोई बहाना नहीं चलेगा कि देर से बताया.

ऑफिस में अगर लड़की हो तो बॉस तमीज से बात करे, कॉफी पर ले जाये और फटाफट प्रमोशन. सब बस मुस्कराते रहने का पुरुस्कार और हम डांट खा रहे हैं कि क्या ढ़ीट की तरह मुस्कराते रहते हो, शरम नहीं आती. एक तो काम समय पर नहीं करते और जब देखो तब चाय के लिए गायब. क्या करें महाराज, रोने लगें? बताओ?

अगर पति सही आईटम मिल जाये तो ऑफिस की भी जरूरत नहीं और आराम ही आराम. जब जो जी चाहे करो बाकी तो नौकर चाकर संभाल ही रहे हैं. आखिर पतिदेव आईटम जो हैं. जब मन हो सो कर उठो, चाय पिओ, नाश्ता करो और फिर ठर्रा कर बाजार घूमों, टीवी देखो, ब्लॉगिंग करो. फिर सोओ. रात के लिए क्या बनना है नौकर को बता दो, फुरसत! क्या कमाल है, वाह. काश, हम लड़के भी यह कर पायें.

क्या-क्या गिनवाऊँ, पूरी उपन्यास भर जायेगी मगर दर्द जरा भी कम न होगा. रो भी नहीं सकता, वो भी लड़कियों को ही सुहाता है. उससे भी उनके ही काम बनते हैं. हम रो दें तो सब हँसे कि कैसा लड़का है? लड़का हो कर रोता है. बंद कर नौटंकी. भर पाये महाराज!

बस प्रभु, मेरी प्रार्थना सुन लो-अगले जनम मोहे बेटवा न कीजो. हाँ मगर ध्यान रखना महाराज, रंग रूप देने में कोताहि न बरतना-इस बार तो लड़के थे, चला ले गये. लड़की होंगे तो तुम्हारी यह नौटंकीबाजी न चल पायेगी. जरा ध्यान रखना, वर्कमैनशिप का. किसी अच्छी-सी फिल्मी हिरोईन की फोटू को सुपरवाईजरी ड्राईंग मानना, विश्वकर्मा जी. 19/20 चलेगा-खर्चा पानी अलग से देख लेंगे.

बस प्रभु, अब सुन लो इत्ती अरज हमारी...

अगले जनम में बना देईयो हमका नारी..

कोई तो उठाओ भई मुद्दा पुरुष आरक्षण का. कौन जाने विश्वकर्मा जी के दरबार में सुनवाई न हो तो फिर पुरुष ही बन कर आ जायें.

होली पर सीखा पाठ

प्रश्न यह उठता कि अपने आदर्शों पर कैसे डटा जा सकता है? एवं कैसे अपनी शक्ति और योग्यता के दुरुपयोग से बचा जा सकता है? इसकी कोई गारंटी तो है नहीं. किन्तु कुछ भी संपन्न करने से पहले यदि लोभ, प्रलोभन और अहंकार के बिना 'परिणाम' पर विचार कर लिया जाय तो कदाचित उचित पथ का प्रदर्शन स्वयं ही हो जाये.

◆ *राज महेश्वरी, कैनेडा*

उन दिनों होली आने की बात सुनकर हम उल्लासित होने लगते थे और हमारे मन में मस्ती मारने के अनेक विचार करवटें बदलने लगते थे.

हमारे पिता जी होली पर हम भाई-बहनों को होली के आदर्शों के विषय में बताते. कहते, देखो! बालक भक्त प्रह्लाद कैसे अपने आदर्शों के लिए अपने जीवन का बलिदान करने को तत्पर था? इससे प्रेरित होकर तुम्हें भी अपने आदर्शों पर अडिग रहना चाहिए.

तो एक ओर तो भक्त प्रह्लाद का आदर्श किन्तु दूसरी ओर प्रह्लाद की बुआ होलिका द्वारा अपनी शक्ति का दुरुपयोग भी याद रखने योग्य है. यदि हमें कोई योग्यता प्राप्त हो तो उसका सदुपयोग आवश्यक है, नहीं तो परिणाम विध्वंसकारी और हानिकारक ही होगा. होलिका ने अपने वरदान अथवा शक्ति का उपयोग भक्त प्रह्लाद को मारने के लिये करना चाहा किन्तु वह स्वयं ही भस्म हो गयी. अर्थात दुरुपयोग करने की भावना के कारण होलिका का वरदान अथवा शक्ति उसे सुरक्षित न रख सकी.

अब प्रश्न यह उठता कि अपने आदर्शों पर कैसे डटा जा सकता है? एवं कैसे अपनी शक्ति और योग्यता के दुरुपयोग से बचा जा सकता है? इसकी कोई गारंटी तो है नहीं. किन्तु कुछ भी संपन्न करने से पहले यदि लोभ, प्रलोभन और अहंकार के बिना 'परिणाम' पर विचार कर लिया जाय तो कदाचित उचित पथ का प्रदर्शन स्वयं ही हो जाये.

यदि जाने अथवा अनजाने में कोई गलत कार्य हो ही जाये तो उससे सीख लेने में ही भलाई है. एक होली पर हमारे साथ ऐसा ही हुआ. प्रत्येक वर्ष की भांति उस वर्ष भी उल्लास और उत्साह से होली पर्व का आगमन हुआ. मैं उस समय 10-11 वर्ष का था. सदा की भाँति मेरे पिताजी रंग की होली खेले जाने वाले दिन से पहले सूखे टेसू के फूल खरीदकर अपनी धोती के छोर में बांधकर लाए. मैंने बड़ी लगन से कल होली खेलने के आनंद के ध्यान में मग्न टेसू के फूलों को डेग में डालकर उसे नल चलाकर पानी से भर दिया. उस रात स्वप्न में भी होली खेलने का आनंद उठाता रहा.

अगले दिन गुलाल, पिचकारी और डोलची में टेसू के फूलों का सुगन्धित जल भर-भर कर होली मन भर खेलता रहा. होली खेलते-खेलते मेरे मन में न जाने यह विचार कहा से आया कि यदि मैं डोलची में पानी के साथ टेसू भी मिला दूँ तो बड़ा मज़ा आएगा... आखिर को टेसू फूलों को बाद में फेंक ही दिया जाता है.

दो-तीन दिन बाद हमारे मोहल्ले में रहने वाले 'जग चाचा' हमारे घर आये. चाचा सदैव मुस्कराते रहते थे. उन्हें बच्चों से बड़ा प्यार था. उन्होंने अपने हाथ से कुछ मूंगफली मेरे हाथ पर रख दी. उन्हें मालूम था कि मूंगफली मुझे बहुत पसंद थीं.

थोड़ी देर बाद मेरे पिता जी और मेरी दादी से बात करने के पश्चात वे मेरे पास आये और बोले- 'बेटा तू मेरी पीठ देख!' यह कहते हुए उन्होंने कुर्ता ऊपर करके अपनी पीठ उघार दी. मैंने देखा कि उनकी पीठ पर लाल, पीले चकत्ते पड़े थे. मैंने कहा- 'चाचा यह क्या हुआ?' वे बोले, 'बेटे तूने डोलची में न जाने क्या भरकर मेरी पीठ पर मारा था, कि बहुत पीड़ा के साथ यह चक्कते उभर आये हैं. लेकिन तू चिंता न कर, ठीक हो जायेंगे.' चाचा की पीड़ा से मेरा मन पिघलने लगा था.

यह देख और सुनकर मुझे बहुत ग्लानि हुई और मैं रोने लगा. चाचा बोले, 'बेटा सुन. अब तू समझदार है. कुछ करने से पहले उसका परिणाम सोचना चाहिए और यदि समझ में न आये तो अपने से बड़ों से पूछ लेना चाहिए तो ठीक रहता है.'

मैंने तभी से अपने आपको एक वचन दिया कि अब भविष्य में कुछ भी करने से पहले उसके परिणाम के विषय में अवश्य सोचूंगा और साथ ही एक पाठ भी सीखा.

तब से अब तक प्रत्येक होली पर मैं पिताजी द्वारा बताए आदर्श, योग्यता का सदुपयोग, उस होली की घटना एवं अपने लिए किया वचन याद कर लेता हूँ. ◆◆◆

व्यंग्य

प्रभु... आप अपना नाम बदल दो!

◆ पाराशर गौड़, कैनेडा

बैकुंठ में भगवन नारायण संसार की गतिविधियों पर नज़र रखते-रखते बहुत थक गए थे! उन्होंने ईमेल करके सब देवताओं खासकर नारद जी को ये सन्देश लिखा 'मैं दो दिन के अवकास पर जा रहा हूँ कृपया मुझे डिस्टर्व न किया जाया!' लेकिन, इसी बीच एक विचित्र घटना घट गई! जैसे ही पृथ्वीलोक से ख़ासकर हिन्दुस्तान से ये खबर आई कि नारायण ने बहुत बड़ा घपला कर दिया है और वो किसी बड़े काण्ड में फंस गए हैं! ये सुनकर नारद बहुत बिचलित हुए! सोचने लगे कि कहीं सचमुच प्रभु नारायण अवकास मनाने हिदुस्तान गए हों और वहां किसी छली/धोखेबाज ने उन्हें लपेट लिया हो! फिर सोचा क्यों ना हिदुस्तान जाकर हालत का जायजा लिया जाये!

जब वे हिदुस्तान की ओर जा रहे थे रास्ते में सोचते रहे। मेरे प्रभु श्री नारायण तो ऐसा नहीं कर सकते, तो फिर ये कौन हो सकता है और उसने ऐसा क्या किया है जिसकी बजह से ये ब्रेकिंग न्यूज बन गई। जैसे ही नारद वहां पहुंचे उन्होंने नारायण नाम के आदमियों के बारे में खोज खबर की। पता चाल यहाँ तो नारायण के नाम से कई हजारों में लोग हैं। ऐसे नारायण हैं ये नारायण नाम शब्द कभी पहले होते हैं जैसे नारायण राणे, नारायण दत, तो किसकी का लास्ट में, जैसे आर. के. नारायण या फिर बीच है, जैसे में. लक्ष्मी नारायण स्वरुप! नारद जी दुविधा में पड़ गए। अपने नारायण को ढूढूं या इनमें किस को, की तभी टेलीबिजन पर न्यूज

जब वे हिदुस्तान की ओर जा रहे थे रास्ते में सोचते रहे। मेरे प्रभु श्री नारायण तो ऐसा नहीं कर सकते, तो फिर ये कौन हो सकता है और उसने ऐसा क्या किया है जिसकी बजह से ये ब्रेकिंग न्यूज बन गई। जैसे ही नारद वहां पहुंचे उन्होंने नारायण नाम के आदमियों के बारे में खोज खबर की। पता चाल यहाँ तो नारायण के नाम से कई हजारों में लोग हैं।

दिखाई दी, जिसमें खबर थी...

'एक धाकड़ नेता जिनकी उम्र 80 के करीब है और जो इस समय किसी प्रदेश के राज्यपाल हैं। वो सरकार में विशिष्ट पदों पर रहे जैसे विदेश मंत्री, उद्योग मंत्री, वे भारत के सबसे बड़े राज्य के कई बार मुख्यमंत्री, हाल में बना नया राज्य जहां उनका पैतृक घर भी है, वे वहाँ के भी मुख्यमंत्री भी रहे चुके हैं। जिनका नाम भारत के भगवान श्री नारायण से भी मिलता है - राजभवन में रासलीला रचाते हुए धरे गए!

नारद जी ने अपने बगल में खड़े एक सज्जन से उन्होंने पूछा, भाई जी ये साहब...? वो बिना देखे बोल पड़ा, अरे, वो एनड़ी है और कौन? नारद जी एनड़ी का पता पूछते-पूछते जा पहुंचे राजभवन! जब वो वहां पहुंचे तो सबकी जुबान पर एक ही चर्चा थी की नारारण को ये नहीं करना चाहिए था! नारायण तो एक मायने में इस प्रान्त का पिता समान है! उसकी रासलीला की वो तस्वीरें, टेलीविजन में बार-बार दिखा-दिखाकर और नारद जी देख-देखकर बहुत लज्जित हुए! भारत में आकर उनका शक तो दूर हो गया था कि ये काम उनके नारायण का नहीं है, लेकिन उनके नाम राशियों द्वारा किये जा रहे इन सब घपलों व कांडों से वो बहुत चिंतित हो उठे और चल दिए सीधे बैंकुठ को!

प्रभु अपने शेषनाग की शैय्या पर आराम कर रहे थे कि नारद जी के नारायण नारायण शब्द ने उनको जगा दिया। आंख खोलकर उन्होंने उनसे कहा 'मैं आपका बहुत आभारी हूँ जो आपने मुझे इन दो दिनों में डिस्टर्ब नहीं किया। वरना मेरी वैकिशन की... खैर छोडिये, बताये कि कैसे आना हुआ।

नारद जी ने प्रणाम करते हुए कहा प्रभो... भारत में आपके नाम का खुलकर दुरुपयोग हो रहा है। आपके द्वारा की गई रासलीलाओं का जमकर मजाक उड़ाया जा रहा है।

प्रभु बोले... ऐसा? एकाध उदाहरण देकर समझाओ तो?

देखिए आप जगत पिता हैं। आपको सब की चिंता रहती है। इसीलिए तो सब आपको नारायण के नाम से जानते हैं, पुकारते हैं। लेकिन...?

लेकिन क्या नारद जी... आगे भी तो बोलिए... क्या किया है नारायण ने।

आपने नहीं... आपके नामराशियों ने वहां आपका नाम इतना अपवित्र कर दिया है कि मुझे नारायण कहने में भी संकोच होने लगता है।

भगवान थोड़ा अप्रसन्न होकर नारद से कहने लगे, नारद अब आप ज्यादा ही खीच रहे हैं, सीधे-सीधे बात पर आएँ।

क्षमा प्रभो... क्षमा... जैसे ही आपकी ईमेल मिली सोचा चलो आपको थोड़ा विश्राम तो मिला लेकिन दूसरे दिन मुझे भारत से एक ब्रेकिंग न्यूज मिली कि नारायण किसी घपले में फंस गए हैं। मन बिचलित हो उठा कि कहीं मेरे नारायण...!

कैसा घपला, कौन सा घपला... जरा खुलकर बताओ मित्र भगवन जी ने उनसे कहा।

वहां पर आपके नाम राशि जिसका नाम भी नारायण है। लोग उसे नो छमी नारायण के नाम से जानते हैं। जो बहुत बहुत ऊँचे-ऊँचे ओहदे पर रहकर, सत्ता और कुर्सी के मद में रहकर, उसने वो वो कारनामे किये, वो-वो काण्ड किये जिसका बयान करते मेरी जीभ कलंकित हो जाती है। प्रभो, उन्होंने आपके नाम पर जो धब्बा लगाया है, अगर उसे किसी इम्पोरटिड डिटर्जन या केमिकल से भी धोये तो भी वो साफ़ नही होगा।

पर ऐसा क्या किया है उसने हमें पता भी तो चले।

रासलीला, प्रभो रास लीला... नारद ने गिड़गिड़ाते हुए कहा।

ओआईसी... याने हमरा अनुकरण किया है उसने...

अनुकरण किया होता तो कोई बात नहीं थी प्रभो...! बांसुरी बजाते बजाते... कहते-कहते नारद जी थोड़ी देर चुप हो गये... उनकी इस चुप्पी को देखकर नारायण बोले... नारद आप हमरा इम्तिहान ना लें। नारद डरते-डरते बोले... आपका

वहां पर आपके नाम राशि जिसका नाम भी नारायण है। लोग उसे नो छमी नारायण के नाम से जानते हैं। जो बहुत बहुत ऊँचे-ऊँचे ओहदे पर रहकर, सत्ता और कुर्सी के मद में रहकर, उसने वो वो कारनामे किये, वो-वो काण्ड किये जिसका बयान करते मेरी जीभ कलंकित हो जाती है। प्रभो, उन्होंने आपके नाम पर जो धब्बा लगाया है, अगर उसे किसी इम्पोरटिड डिटर्जन या केमिकल से भी धोये तो भी वो साफ़ नही होगा।

इम्तिहान..., तोबा-तोबा! मैं तो आपके और माते राधे के प्रेम के वे रास लीला के बारे में सोच रहा था। प्रभो जब आप रास रचाते थे तो पूरा संसार आपके उस पवित्र लीला का रसास्वादन कर आत्मविभोर हो जाता था, लेकिन यहाँ तो वे एक कमरे में बंद डिजिटल कैमरे के आगे... छी... छी... मुझे तो कहते हए भी...

बीच में प्रभु बोले... उन्होंने हमारी रास लीला का उपहास कर उसे भोगलीला बना दिया है ऐसा क्यों नहीं कहते...

हाँ ऐसा ही किया ही उन्होंने, नारद ने उत्तर दिया। प्रभो मुझे इस घृणित कार्यक्रम में कोई दिलचस्पी नहीं है लेकिन...

लेकिन क्या नारद, तुम पहेलियाँ ज्यादा बुझाते हो। साफ़-साफ़ कहो क्या कहना चाहते हो, प्रभु ने कहा।

मैं आपका नाम उस व्यक्ति के नाम से जुड़ा होने पर थोड़ा बिचलित हूँ। लोग गलियों, मोहल्लों, अखबारों, टीवी पर एक ही बात कर रहे हैं और उसके उस भोगलीला को बार-बार दिखा-दिखा कर बस एक ही सवाल पूछ रहे हैं और कह रहे हैं कि किसने किया ये उलटा काम। तो सब एक ही जुबान से बोलते है 'नारायण' ने। उस नारायण ने अपने पद का दुरुपयोग जो किया सो किया परन्तु उसने आपके नाम का भी जमकर दुरुपयोग किया है। प्रभो, अगर जीवनदान मिले तो एक सुझाव है...

क्या...?

नारद ने डरते-डरते कहा... आप अपना नाम बदल दो। ◆◆◆

नीलकंठ

विकट-व्यथा ने कालकूट बन जीवन को धमकाया जब-जब
नीलकंठ बन तब-तब मैंने जग-हित में विषपान किया है

सच की कीमत पता मुझे, पर
प्राण-दंड से डरता कब हूं
सूली देती है दुनिया, पर
मर कर भी मैं मरता कब हूं

मृत्यु-वरण का शाप दिया है इस दुनिया ने मुझको जब-जब
नचिकेता बन तब-तब मैंने यम से भी वरदान लिया है

हर शोषण से मुक्त मनुज हो
अलख जगाते चलता हूं मैं
घोर निशा तम की जब छाती
दीप सरीखा जलता हूं मैं

देह-दनुज के महासमर में असुर हुआ है दुर्जय जब-जब
ऋषि दधीचि बन तब-तब मैंने स्वयं अस्थि का दान दिया है।

■ *रविकांत पाण्डेय, कानपुर*

संस्कारों की गठरी

जीवन में पैबंद नहीं था
फिर भी इसको ब्रान्डेड करने के लिए
पराई धरती पर कदम रखा
लड़खड़ाई घबराई
पर विदेशी आकाश में
एक कदम कोना पा ही लिया
संस्कारों की गठरी थामे
मुख्यधारा में शामिल होने की
मासूम कोशिश की
तेज थी हवा की मार
तेज थी समय की धार
तेज थी जीवन की रफ्तार भी
इस तेजी में
हुई पकड़ ढीली
फिसल गई गठरी
बनी पांव की ठोकर
और तिनका-तिनका बिखर गई
मैं उन्मुक्त उड़ने लगी
खुद को उनमे से ही एक समझने लगी
कभी कुछ कटाक्ष
कुछ उपेक्षा के शब्द
चोले बदल मुझ तक आये
मुख्यधारा से सिमट
मैं हाशिये पर आ गई
समझने और होने का फर्क
दंश सा चुभता रहा
इनके बीच हो के भी
मैं इनकी न थी
इनके जैसी न थी
कुचले बिखरे संस्कारों को
धुंधली आँखों से चुनती रही
इस पोटली में
आत्मसम्मान की गांठ लगाती रही
तेज़ थी हवा की धार
तेज़ थी समय की मार
तेज़ थी जीवन की रफ्तार भी
पर अब की पकड़ ढीली न हुई।

■ *रचना श्रीवास्तव, अमेरिका*

जाने किस बात की अब तक वो सज़ा देता है
बात करता है कि बस जी ही जला देता है
बात होती है इशारों में जो रूठे हैं कभी
उसका हम पर यूँ बिगड़ना भी मज़ा देता है
बात करेने का सलीका भी तो कुछ होता है
वो हरिक बात पे नश्तर सा चुभा देता है
हमने दी है जो कभी उसको खुशी की अर्ज़ी
पुर्जा-पुर्जा वो हवाओं में उड़ा देता है
है अँधेरों में चराग़ों सा वजूद उसका 'ख़याल'
राह भटका हो कोई राह दिखा देता है।

■ *सतपाल ख़याल, भारत*

पूछे तो कोई जाकर ये कुनबों के सरदारों से
हासिल क्या होता है आखिर जलसों से या नारों से

रोजाना ही खून-खराबा पढ़कर ऐसा हाल हुआ
सहमी रहती मेरी बस्ती सुबहों के अखबारों से

पैर बचाये चलते हो जिस गीली मिट्टी से साहिब
कितनी खुश्बू होती है इसमें पूछो तो कुम्हारों से

हर पूनम की रात यही सोचे है बेचारा चंदा
सागर कब छूयेगा उसको अपने उन्नत ज्वारों से

जब परबत के ऊपर बादल-पुरवाई में होड़ लगी
मौसम की इक बारिश ने फिर जोंती झील फुहारों से

उपमायें भी हटकर हों, कहने का हो अंदाज नया
शब्दों की दुनिया सजती है अलबेले फनकारों से

ऊधो से क्या लेना गौतम माधो को क्या देना है
अपनी डफली, सुर अपना, सीखो जग के व्यवहारों से।

■ *मेजर गौतम राजरिशी, भारत*

Ashok Malik

Sales Representative REALTOR MULTIPLE LISTING SERVICE

NetPlus Realty Sales Inc., *Brokerage*

Independently Canadian Owned & Operated

Office: (416) 287-6888 Direct No: (647) 483-7075

5524A Lawrence Ave. E, Toronto, Ontario M1C 3B2

ashokmalik@rogers.com

Ask us about New Homes and Investment Properties.

THINKING OF SELLING OR BUYING?
FREE MARKET EVALUATION

FULL MLS SERVICE & FULL MARKETING = SOLD!

We Offer:

- No up-front fees
- We advertise your home for free
- We provide attractive yard sign
- Agents show your home by appointments to prospective buyers.
- We negotiate the purchace agreement
- We pre-qualify all buyers
- We help arrange financing and oversee the inspections
- We handle all the paperwork and supervise the closing

Whats's Your Home Worth?
Contact us for a free, no hassle
Market Evaluation of your home

"Bottom Line: "We provide Professional Full Services With local experience & knowledge."

not intended to solicit properties already listed for sale

दोहे

ओस कणों की आरसी, भोर करे श्रृंगार
सूरज प्राची द्वार खड़ा, ले स्वर्णिम उपहार.
भोर से कलियाँ पूछतीं, कहाँ से लाई रंग
होली खेल के आई क्या, इन्द्रधनु के संग.
पीत गुलाबी ओढ़नी, कुँकुम सोहे भाल
दर्पण मुखड़ा देखती भोर हुई गुलाल.
रत्नजड़ी है पैंजनी, कुन्दन का गलहार
स्वर्णाकिरण की चूड़ियाँ, धूप गई संवार.
नीड़-नीड़ में बात चली, लहर-लहर में गान
सज-धज निकली षोडषी, मुग्ध खड़े दिनमान.
नभ आँगन में खेलती, लाल महावर पाँव
छम-छम करती शाख पे, जागा सारा गाँव.
एक रजत सी चाँदनी, एक स्वर्ण सी भोर
दोनों सखियाँ रूपमती, दोनों ही बेजोड़.
मुड़-मुड़ देखा चाँद ने, कौन खड़ा उस पार
अनमना-सा चल पड़ा, मन की बाजी हार.

■ *शशि पाधा, अमेरिका*

मत्र-भाव अनमोल है, यह रिश्ता निष्काम
मित्र मनाये-मित्र हित, 'सदा कुशल हो राम'.
जन्म ब्याह राखी तिलक, ग्रह प्रवेश त्यौहार
'सलिल' बचा पौधे लगा, दें पुस्तक उपहार.
शब्द-शब्द अनुभूतियाँ, अक्षर-अक्षर भाव
नाद, थाप, सुर, ताल से, मिटते सकल अभाव.
उसको ही रस-निधि मिले, जो होता रस-लीन
पान न रस का अन्य को, करने दे रस-हीन.
साथ रहा संसार तो, उसका रहा न साथ
सबने छोड़ा साथ तो, पाया उसको साथ.
स्नेह साधना नित करे, जो मन में धर धीर
इस दुनिया में है नहीं, उससे बड़ा अमीर.
कर सच से साक्षात मन, हो जाता है संत
भुला कामना कामिनी, हो चिंता का अंत.
जो मिलता ले लुटाती, तिनका रखे न पास
निर्मल रहती नर्मदा, सबको बाँट हुलास

■ *आचार्य संजीव 'सलिल', भारत*

न्यूनतम तापमान, होली में जमता रंग,
पिचकारी कैसे भरूँ, बरफबारी के संग।

इन्टरनेट की आड़ में, देख बधाई पत्र,
फागुन भर की याद से, रंग दिखा सर्वत्र।

हिंदी स्कूल नार्वे में, खूब मचा हुडदंग
एक दूजे के गाल में लगा दिया है रंग।

मारीशस के अनथ सुने कपिल कुण्डलियाँ,
होली में भाने लगीं हैं मुंबई की गलियां।

बेशक लिबरल की सांसद हैं रूबी धल्ला,
कनाडावासी खेलें होली खुल्लम खुल्ला।

जब भी भारत जायेंगे एक पेड़ लगायेंगे,
नदी का पानी एक ड्रम साफ़ करेंगे।

जब करोड़ भारती नदिया साफ़ करेंगे,
आगामी होली में नदियों में रंग घोलेंगे।

होली, हमजोली आँख मिचौली खेले,
जैसे नेता भारत की जनता को तौले।

जो भी भेजे मेल-बेमेल ई परियों के,
बुरा न मानो होली में छोटी त्रुटियों से।

■ *सुरेशचन्द्र शुक्ल 'शरद आलोक', नार्वे*

CENTENARY OPTICAL

For A Better View of The World

We Offer Affordable Prices in a Wide Variety of Fashionable Frames & Lenses

Designer Frames,
Contact Lenses: Colored, Toric, Bifocal
Eye Exams on Premises,
Brand Name Sun Glasses
Most Insurance Plans Accepted

416-282-2030

2864 Ellesmere Rd, @ Neilson Scarborough, Ontario M1E 4B8

RAVI JOSHI
Licensed Optician &
Contact Lens Fitter

Learn Hindi!

सु+भाषा SU+BHASHA KIDS HINDI

Magnetic board letter set

INTRODUCTORY SET / LEVEL 1

Includes:
* 8.5" x 11" metal board
* 49 Devanagari magnatic letters
* Sound chart on back of board

For ages 4 and up

KIDS HINDI.COM
SUBHASHA.COM
spanchii@yahoo.com
Ph. 1-508-872-0012

हर कोणों से

ओ मौसम
बसंत आने पर
मेरे घर आँगन में भी
एक ऐसा फूल खिला देना
जिससे उठे खुशबू
आस्था और विश्वास की
जिसकी पंखुड़ियां हो ऐसी
जैसे फैली हो बाहें प्यार की
जिसमे रंग हों ऐसे
जो मन के आँगन में
सजा दें रंगोली ऐसी
जिसके हर कोणों से दमके आभा
हिन्दू मुस्लिम सिख ईसाई के
आपसी प्रेम और एकता की
जो नेह का प्रतिरूप हो
जीवन के अनुरूप हो
नईशक्ति का स्वरुप हो

डॉ. सरस्वती माथुर, जयपुर

होली

होली आई रंग है लाई
कान्हा ने है धूम मचाई
जिसको देखो उसको पकड़े
करदे सबका मुखड़ा लाल.

किसी को मारे भर पिचकारी
किसी के गालों पे मले गुलाल
कोइ न बच सके कान्हा से
ऐसा बिछाया है उसने जाल.

राधा आयी है लेकर टोली
खेलेंगे कान्हा से होली
ढूंढ़ रही है घर-घर जाकर
कहाँ छुपा है नन्द का लाल.

मुरली की धुन पर मोहित होकर
कुञ्ज की ओर चली ब्रजलाल
मौका देखकर माखनचोर ने
राधे को कर दिया लाल ही लाल.

होली आयी रंग है लाई
कान्हा ने है धूम मचाई.

■ *राजीव रंजन, कैनेडा*

झुर्रियों में छिपा सच

मेरे दोस्त!
ये जो झुर्रियां तुम देख रहे हो न,
ये अनायास नहीं उग आई हैं इन गालों पर
कभी ये झुर्रियों वाले गाल
तुम्हारी ही तरह
बेहद चिकने और मुलायम थे
और लोग इन्हें सेवों की उपमा दिया करते थे!
उन दिनों हमारे गालों पर भी लाली थी
हम भी इतराया करते थे
इनकी लाली और चिकनाहट पर!
रातों जगा करते थे हम भी
गालों की रंगीनी बातें करते हुए!
आज तुम हँसते हो ये झुर्रियां देख कर,
लेकिन हम कभी नहीं हँसे,
क्योकि हमें बताया गया था
माँ-बाप के द्वारा,
इन झुर्रियों का सच
वो सच यह है मेरे दोस्त
कि जीवन जब पकता है
अनुभवों की भट्टी में
तब वो दे जाता है ये निशानियाँ
आदमी को इसलिए कि
दुनिया जान सके उसका सच
जो उसने पाया है जवानी को खोकर!
इसीलिए कहता हूँ तुमसे, मेरे दोस्त!
मत हँसो इन झुर्रियों पर
बल्कि इनके भोगे हुए सच को
प्रणाम करो!

■ *डॉ. योगेन्द्र नाथ शर्मा 'अरुण', दिल्ली*

दोहे

उल्टी गंगा दाता की, कह दूँ साँची बात।
मुर्दों को है ताजमहल, ज़िन्दों को फ़ुटपाथ।।

ज़्यादा सुन्दर मुखन पे, ना होना बेताब।
उतने काँटे झार में, जितने फूल गुलाब।।

एक दोष पे रो पड़ा, है तू क्या बन्दे।
सीता जैसी नार पे, कर बैठे सन्दे।।

मानव अहंकार को, पीपल सीख सिखाये।
जितना नीचे जाये है, उतना ऊपर जाये।।

उत्तर दे गईं इन्दरियाँ, गिर गये हाथ पसार।
परजा ही जब ग़ैर हुई, कहा करे सरकार।।

बंटवारा इक शाप है, शक्ति क्षीण बनाये।
बूँद-बूँद जो मेघ पड़े, मिट्टी में मिल जाये।।

अब क्या चला है पोंछने, तू निर्धन के नीर।
एक बना तू बादशाह, लाखों बने फ़कीर।।

मन उतना ही साँकरा, जो जितना धनवान।
फूल भरे हैं डार पे, ना पंछी को थान।।

बाँसुरी के भाग पर, अचरज करता क्यूँ।
मन में छेद छिदाये तब, लगी पिया के मूँ।।

साध मरे तो सभी मरें, सब हि नीर बहायें।
उन से तो दुर्जन भले, मरके खुश कर जायें।।

सुख, सम्पत और शान्ति, महनत की संतान।
जितनी जारे लाकरी, उतने ही पकवान।।

रखिये नाता जोरिके, संस्कार के संग।
धागा ही जब ना जुड़े, कैसे उड़े पतंग।।

जीवदया से देस के, भरे पड़े बाज़ार।
बच्चे झूठन चाटते, कुत्ते घूमें कार।।

जो भी जितना रोये है, उतना ही मुस्काये।
पौधा ही न सींचिये, फूल कहाँ से आये।।

■ *डॉ. अफ़रोज़ ताज, अमेरिका*

EKAL VIDYALAYA

एकल विद्यालय – एक अध्यापक वाला स्कूल

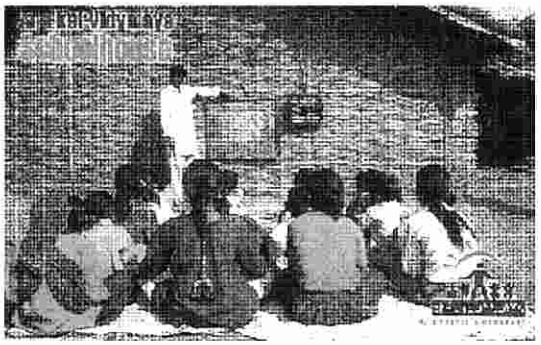

यह स्वयं सेवकों वाली योजना जो कि आदिवासी व पिछड़ी हुई जातियों के बच्चों को शिक्षित करने के उद्देश्य से बनाई गई है। इसमें सरकार का कोई योगदान नहीं है, यह नि:शुल्क है। इसका उद्देश्य आदिवासी लोगों के बच्चों को निरक्षरता से उन्मुक्त करना है। यह जनता का आन्दोलन है। जैसा कि सर्वविदित है कि आदिवासियों में साक्षरता बिल्कुल न के बराबर है। पुरुषों में 12 प्रतिशत और स्त्रियों में 5 प्रतिशत। यह आन्दोलन अभी बिल्कुल नया है किन्तु कुछ ही समय में हमने इस दिशा में आश्चर्यजनक उन्नति की है। भारत में 133,913 आदिवासियों के गाँव हैं जिनमें 10 या 12 प्रतिशत गाँवों में स्कूल हैं।

'एकल विद्यालय' के आन्दोलन से आज 27,041 पाठशालाएँ खुल चुकी हैं। ये स्कूल भारत और नेपाल के सीमावर्ती स्थानों में सेवा कर रहे हैं। इस समय 7,53,123 विद्यार्थी इनमें शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। हमारा विश्वास है कि 2011 के अंत तक हम 100,000 पाठशालाएँ खोल सकेंगे।

इस महान सेवा में हमें आपके सहयोग की बहुत आवश्यकता है। यह सबसे कम खर्चे वाली योजना है जिसमें एक स्कूल को चलाने के लिए लगभग 400 डालर साल में खर्च होते हैं और लगभग 25 से 40 विद्यार्थी इसमें शिक्षा ग्रहण कर सकते है। हमें आशा है कि आप हमारे इस स्वप्न को साकार कराने में हमारे साथ हैं। हम आपको आपके अनुदान के लिए टैक्स की रसीद भी देते हैं।

आओ मिलकर हम सब शिक्षा का दीप जलाएँ।
उन आदिवासियों के जीवन में आशा की किरण जगाएँ।।
जब तक अविद्या का अँधेरा हम मिटावेंगे नहीं,
तब तक समुज्वल ज्ञान का आलोक पावेंगे नहीं।

कैनेडा में एकल विद्यालय फाउन्डेशन का पता

817- 25 KINGSBRIDGE GDN.CIR.,
MISSISSAUGA, ON. L5R 4B1
EMAIL: RV1_CA@YAHOO.COM,
WWW.EKAL.ORG,
T.NO. 905- 568-5235

FAMILY DENTIST

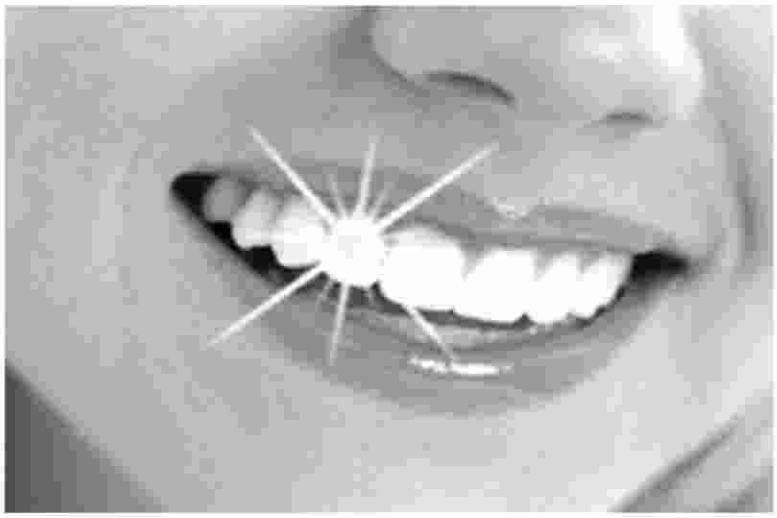

Dr. N.C. Sharma
Dental Surgeon

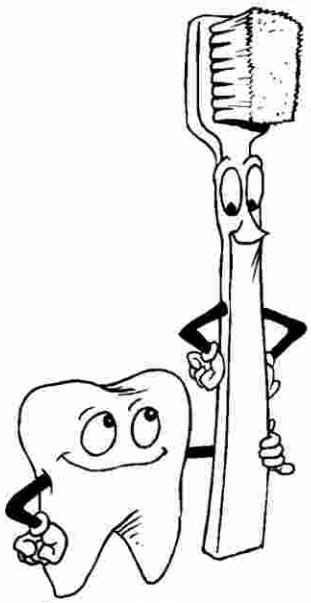

Dr. C. Ram Goyal
Family Dentist

Dr. Narula Jatinder
Family Dentist

Call us at: 416-222-5718

1100 Sheppard Avenue East, Suite 211, Toronto, Ontario M2K 2W1 Fax: 416-222-9777

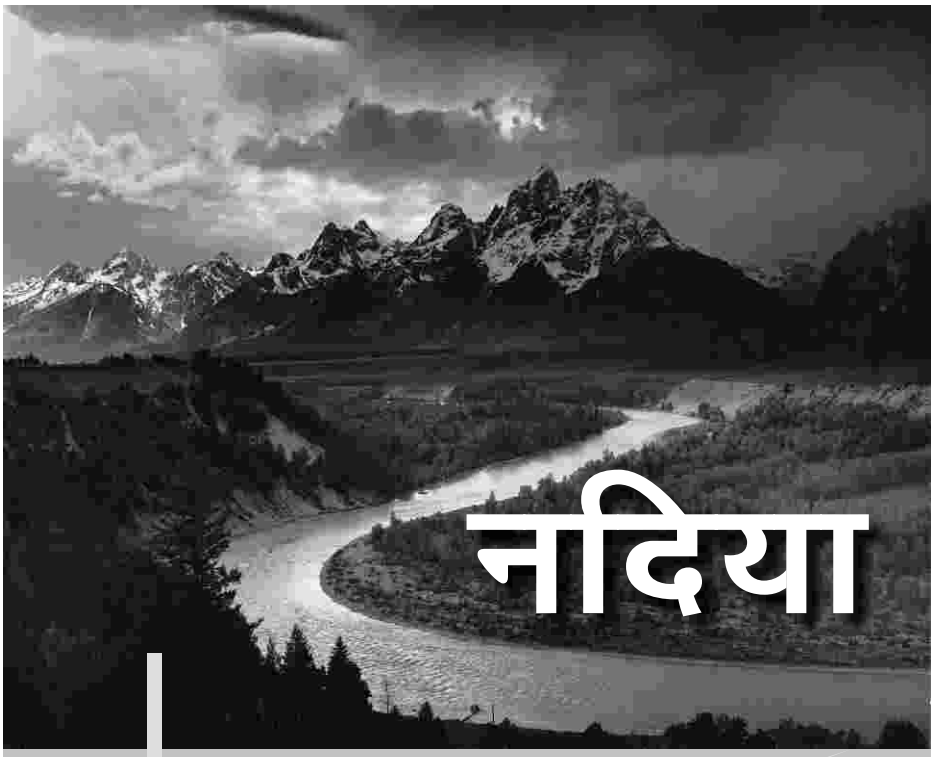

नदिया

एक तरफ है बचपन मेरो, यौवन दूजी ओर
खड़ी डगर पे अक्सर सोचूँ, जाऊँ मैं कित ओर
जाऊँ मैं कित ओर बाबा...

नदिया की मैं चंचल धारा, रुकना मेरा काम नहीं
तेरे दर से स्रोत है मेरा, मंज़िल पीघर ओर
मंज़िल पीघर ओर बाबा...

नहियर से पीघर का रस्ता, बाबुल मुझको पार करा दे
एक सफर का अन्त हुआ है, दूजे की शुरूआत करा दे
बेटी का फर्ज अदा किया, बीवी बहू-ओ-माँ का निभाना है
दे इजाजते-रुखसती बाबा, पीघर मेरा ठिकाना है
मंज़िल पीघर ओर बाबा...

तेरे घर की सोन चिरैय्या
दो दिन की मेहमान थी मैं
एक दिन तो मेहमान को जाना
भाई, मुझको विदा करो
बहिना मुझको विदा करो
सखियों मुझको विदा करो
अम्माँ मुझको विदा करो
बाबा मुझको विदा करो
जाना है दूजे छोर बाबा
मंज़िल पीघर ओर बाबा...

■ *नरेंद्र टंडन, अमेरिका*

कविताएं

अभिव्यक्ति और खेल

ये हमारी अभिव्यिक्त और खेलों
को क्या हो गया
न अदब है न अंदाज़ है
न गहराई है न ठहराव है
न भाव है न सद्भाव है
बस ताव है और दांव है
समय की रफ्तार में
उलझ गए हैं दोनों
एक - पत्र से ई-मेल और
ई-मेल से एसएमएस हो गया
और दूसरा
टेस्ट से वन डे और
वन डे टवंटी टवंटी हो गया.
ये हमारी अभिव्यक्ति और खेलों
को क्या हो गया।

■ *गजेश धारीवाल, मस्कट*

शून्य

शून्य में शून्य की लख अलौकिक छबि
प्राण से प्राण की कुछ बतकही.
बात कुछ भी नहीं केवल अहसास है
एक कहानी नवल सांस कहती रही.
उदधि में है गहनता अपरमित अक्षय
आत्मा प्राण बनकर तो सब में रही.
मैं छितिज के रुपहले सपन में ठगा
वोह तो अप्राप्य है ये जानता ही नहीं.
खोजता-खोजता मन कहाँ न गया
पंख थक से गये पर न पाया खिन.
शक्ति है क्षीर्ण संकल्प संकल्प है
एक समय आयेगा पा ही लूँगा कहीं.
ये गगन ये पवन अब कहेंगे कथा
मेरे विश्वास की की मेरी अभिलाष की.
भूल जाना नहीं मेरे अनुराग को
एक पूंजी मेरी बस बची है यही.

■ *भगवतशरण श्रीवास्तव 'शरण', कैनेडा*

तीन लघु कथाएं

■ *विजय, भारत*

औरत

प्रदीप बाबू को अब महसूस हो रहा था कि उन्होंने डाक्टर की सलाह न मानकर कितनी बड़ी गलती की।

अफसोस जताने के लिए आई प्रदीप की बुआ से उसकी उदास आँखें न देखी गईं। बोली, ''हाय, अभी उम्र ही क्या है मेरे बच्चे की। एक औरत तो चाहिए ही घर सँभालने को। मेरी पहचान में एक विधवा है। गरीबी के कारण बीस साल की जवान बेटी कुँवारी बैठी है बेचारी की। मैं तेरी बात करती हूँ।''

बुआ ने बात चलाई और बयालीस साल के प्रदीप बाबू का विवाह बीस साल की छमा से हो गया।

दस साल की अनुराधा, छह साल की निष्ठा और मात्र बीस दिन का उनका भाई एक कमरे में सोते और पत्नी के साथ प्रदीप बाबू दूसरे कमरे में। बच्चा कभी-कभी बहनों के सम्भाले भी नहीं सम्भलता था। छमा तब पति के पाश से निकलकर उधर जाने का यत्न करने लगती। प्रदीप उसे समझाता 'जब उन दो के सम्भाले नहीं सम्भल रहा है तो तुमसे क्या सम्भलेगा! रोने दो थोड़ी देर, थक-हारकर सो जायगा।' यों कहते हुए अपने पाश को वह और कड़ा कार देता।

'दूसरी औरत को यह आदमी किसके लिए घर में लाया है...'दमघुटी छाया बमुश्किल साँस लेती हुई सोचती' अपने लिए, घर के लिए या बच्चों की देखभाल के लिए!'

बेटियाँ

जच्चगी के पाँचवें दिन ही संध्या को अस्पताल से घर ले चलने के लिए कह दिया था बुआ ने। भतीजे राजेश बाबू को साथ ले वह डॉक्टर के केबिन में जा बैठी थी। डॉक्टर ने राजेश से कहा था, "नई जिन्दगी मिली है आपकी पत्नी को। बुखार अभी भी है। यह बिगड़ भी सकता है अगर ढंग से देखभाल न हुई तो। अच्छा रहेगा यदि पाँच-सात दिन यहीं रहने दें।"

मगर बुआ ने एक न सुनी। बोलीं, "कल छठी है और दस्टौन वाले दिन दावत भी है। घर का डॉक्टर कांत देखभाल कर लेगा..."

'देख लीजिए। जान है तो जहान है।' यों कहते हुए डॉक्टर ने डिस्चार्ज स्लिप बना दी थी।

दावत की बात सुन साथ आई राजेश की बेटियाँ खुश हो गई थीं। पापा से पूछ बैठी थीं -'हमारे पैदा होने पर भी दी थी दस्टौन के दिन दावत?'

राजेश बाबू मुँह खोलते, उससे पहले ही झुँझला उठी थीं पास बैठी बुआ - 'चुप रहो। लडकियों के जनम पर कौन देता है दावत, जो तुम्हारे जनम पर दी जाती।'

लड़कियाँ खामोश रह गईं और खिलौने-जैसे नए भाई को देखने लगीं।

खतरे का भास

'क्या ये हमें काट डालेंगे?' हाथों में औजार थामे जंगल में घुसने को उद्यत कुछ लोगों को देखकर एक पेड़ ने दूसरे से पूछा।

'नहीं, दूसरे पेड़ ने कहा, ''हमें नहीं, क्योंकि हम सड़क-किनारे के पेड़ हैं। मानव-सभ्यता की शोभा हैं।'

'इनके हाथों में बैटरी की ताकत से चलने वाले आरे हैं।' दूसरा बोला,'रातों-रात ये भीतरी जंगल को साफ कर देंगे।'

'हम तो मनुष्य को पर्यावरण देते हैं। जिन्दगी देते हैं। फिर ये हमें क्यों काटते हैं?'

'सड़क के किनारे रहकर भी यह सब नहीं समझता?' दूसरा बोला,'अरे, बाजार ने राजनीति को दलाल बना दिया है। सत्ता या राजनीति अपनी जेबें भरते हैं हमें कटवाकर और राजनीतिज्ञ चिल्लाते रहते हैं - पेड़ बचाओ।'

'मतलब कि सत्ता या राजनीति पेड़ कटवाने के लिए पेड़ लगवाती है! फिर तो एक दिन हमारा भी अंत होकर रहेगा।'

'हमारा ही नहीं, मनुष्य का भी अंत होना है एक दिन।'

तभी जंगल के अंदर कहीं से बैटरी वाले आरे चलने और पेड़ों के चटखने-चीखने, फड़फड़ाहट की आवाज के साथ धराशायी होने की आवाजें सुनाई देनी शुरू हुईं। दोनों के पत्ते हिले, खतरे का भास होने पर कान हिल उठते हैं जैसे। सड़क किनारे के वे पेड़ फिर सो नहीं पाये, सोचते रहे रातभर।

MARKHAM SWEETS & CATERING

LUNCH BUFFET $8.50 PER PERSON

WE CATER TO PARTIES & SPECIAL OCCASIONS

7690 MARKHAM ROAD
UNIT 6C
MARKHAM, ONTARIO
L3S 3K1
TEL: 905-201-8085
FAX: 905-201-8976

MONDAY TO THURSDAY
10:00AM - 9:30PM
FRIDAY TO SATURDAY
10:00AM - 10:30PM

परिवार और परिवेश का प्रतिबिंब

चूड़ीवाला और अन्य कहानियाँ

देवी नागरानी, न्यूजर्सी, अमेरिका

अहले-जर्मी से दूर रहने पर उसी दूरी का अहसास, जिये गये पलों की यादें - जिनकी इमारतें खट्टे-मीठे तजुर्बों से सजाई गयी हैं, उन बीते पलों की कोख से जन्म लेती है सोच, जो इस नये प्रवासी वातावरण में अपने आपको समाहित करने में जुटी है। यहां की ज़िंदगी, आपाधापी का रवैया, रहन-सहन, घर और बाहर की दुनिया की कशमकश! और कशमकश की इस भीड़ में जब इन्सान ख़ुद से भी बात करने का मौका नहीं पाता है तो सोच के अंकुर कलम के सहारे खुद को प्रवाहित करते हैं, प्रकट करते हैं।

कहानी लिखना - एक प्रवाह में बह जाना है। कल्पना के परों पर सवार होकर जब मन परिंदा परवाज़ करता है तो सोच की रफ्तार अपने मन की कल्पना को इस तरह ख़यालों की रौ में बहा ले जाती है कि कल्पना और यथार्थ का अंतर मिटता चला जाता है। ऐसा कब होता है, कैसे होता है, क्यों होता है - कहना नामुमकिन है। लेखक जब ख़ुद अपनी रचना के पात्रों में इस कदर घुल-मिल जाता है तो लगता है एक विराट संसार उसके तन-मन में संचारित हुआ जाता है और फिर वहां मची हलचल को, उस दहकती दशा को कलम के माध्यम से अभिव्यक्त किये बिना उसे मुक्ति नहीं मिलती।

हर इन्सान के आस-पास और अन्तर्मन में एक हलचल होती है। सोचों की भीड़, रिश्तों की भीड़, पाबंदियों की भीड़, सुबह से शाम, शाम से रात, बस दिन ढलता है, सूरज उगता और फिर ढल जाता है और जैसे-जैसे मानव-मन अपने परिवेश से परिचित होकर घुलता-मिलता जाता है तो फिर एक अपनाइयत का दायरा बनने लगता है, मन थाह पाने लगता है।

जी हां! कुदरत के सभी तत्वों के ताने-बाने से बुनी हुई ऐसी कहानियां, आधुनिक समाज में बदलते जीवन मूल्यों को रेखांकित करती हुई हमसे रूबरू हो रही हैं, अमरेन्द कुमार के कहानी संग्रह 'चूड़ीवाला और अन्य कहानियां' के झरोखों से। अमरेन्द्रजी संयुक्त राज्य अमेरिका से निकलने वाली त्रैमासिक हिंदी पत्रिका ई-विश्वा के कुशल सम्पादक रहे हैं। उनकी कहानियों में एक ऐसी दबी चिंगारी पाई जाती है जो पाठक को अपनी आंच की लपेट में लेने से बाज नहीं आती। इस संग्रह में आठ कहानियां हैं जिनमें मेरी पसंदीदा रहीं - मीरा, चूड़ीवाला, चिड़िया, एक पत्ता टूटा हुआ, ग्वासी, रेत पर त्रिकोण।

'मीरा' अमरेन्द्र जी की एक लम्बी कहानी है। एक तरह से कोई जिया गया वृतांत, जिसमें

कहानी लिखना - एक प्रवाह में बह जाना है। कल्पना के परों पर सवार होकर जब मन परिंदा परवाज़ करता है तो सोच की रफ्तार अपने मन की कल्पना को इस तरह ख़यालों की रौ में बहा ले जाती है कि कल्पना और यथार्थ का अंतर मिटता चला जाता है। ऐसा कब होता है, कैसे होता है, क्यों होता है - कहना नामुमकिन है।

विस्मृतियों की अनेक गांठें परस्पर खुलती रहती हैं। इस संग्रह की भूमिका में उनके ही शब्दों में परतें खोलती हुई कलम कह उठती है - 'कहानी मनुष्य की अनुभूत मनोदशाओं का एक पूरा दस्तावेज़ है। यह एक ऐसी दुनिया है जहां सब कुछ अपना है - पात्र, परिवेश, परिस्थिति, आरम्भ, विकास और परिणति।' आगे उनका कथन है कि कहानी का अंत कभी नहीं होता, उसमें एक विराम आ जाता है।

एक कहानी से अनेक कहानियां निकलती है...

सच ही तो है! उनकी कहानियां अपने जिये अनुभवों का एक लघु धारावाहिक उपन्यासिक प्रयास प्रस्तुत करती हैं जो शब्दों के सैलाब से अभिव्यक्त होता है जिसमें कहानी का किरदार, अपने आसपास का माहौल, रहन-सहन, कथन-शैली से जुड़ते हुए भी कितना बेगाना रहता है। एक विडंबनाओं का पूरा सैलाब उमड़ पड़ता है कहानी 'मीरा' के दरमियान जिसमें समाहित है आदमी की पीड़ा, तन्हाईयों का आलम, परिस्थितियों से जूझते हुए कहीं घुटने टेक देने की पीड़ा, उसके बाद भी दिल का कोई कोना इन दशाओं और दिशाओं के बावजूद वैसा ही रहता है - कोरा, अछूता, निरीह, बेबस और कमजोर।

'मां नहीं रही... खबर आई, समय जैसे थम गया, सांस अटक गयी, आंसू निकले और साथ में एक आर्तनाद' लेखक के पात्र का दर्द इस विवरण में शब्दों के माध्यम से परिपूर्णता से ज़ाहिर हो रहा है। आगे लिखते है 'सब कुछ लगा जैसे ढहने, बहने, गिरने और चरमराने और मैं उनके बीच दबता, घुटता और मिटता चला गया।' नियति की बख़्शी हुई बेबसी शायद इन्सान की आखिरी पूंजी है। मन परिन्दा सतह से उठकर अपनी जड़ों से दूर हो जाता है, लेकिन क्या वह बन्धन, उस ममता, उस बिछोह के दुख से उपर उठ पाता है?

अतीत की विशाल परछाईयों में कुछ कोमल, कुछ कठोर, कुछ निर्मल, कुछ म्लान, कुछ साफ, कुछ धुंधली-सी स्मृतियां, टटोलने पर हर मानव मन के किसी कोने में सुरक्षित पायी जाती हैं। दर्द के दायरे में जिया गया हर पल किसी न किसी मोड़ पर फिर जीवित हो उठता है। अमरेंद्रजी की कलम की स्याही कहानी की रौ में कहती-बहती इसी मनोदशा से गुज़रे 'मीरा' के जीवन को रेखांकित कर पाई है, जो बचपन, किशोरावस्था से जवानी और फिर उसी उम्र की ढलान से सूर्योदय से सूर्यास्त तक का सफ़र करती है। कहानी में अमरेन्द्र ने अनुरागी मन के बंधन को खूब उभारा है जहां मीरा की सशक्तता सामने ज़िन्दा बनकर आती है - वहीं नारी जो संकल्पों के पत्थर जुटाकर, अपनी बिख़री आस्थाओं की नींव पर एक नवीन संसार का निर्माण करती है। मानवीय संबंधों की प्रभावशाली कहानी है - मीरा।

उम्र भी क्या चीज है - बदलते मौसमों का पुलिन्दा! शरीर और आत्मा का अथक सफ़र जहाँ हर मोड़ पर एक प्रसंग की परतें खुलती हैं, वहीं दूसरे मोड़ पर एक अन्य कथा को जन्म देती हैं। जीवन के परिवेश के विविध रंगों के ताने-बाने से बुनी ये कहानियां कहीं प्रकृति के समुदाय के प्रभावशाली बिंब सामने दरपेश कर पाती हैं, कहीं चाहे-अनचाहे रिश्तों की संकरी गलियों से हमें

फोटो : उमेश ताम्बी, फिलाडेल्फिया

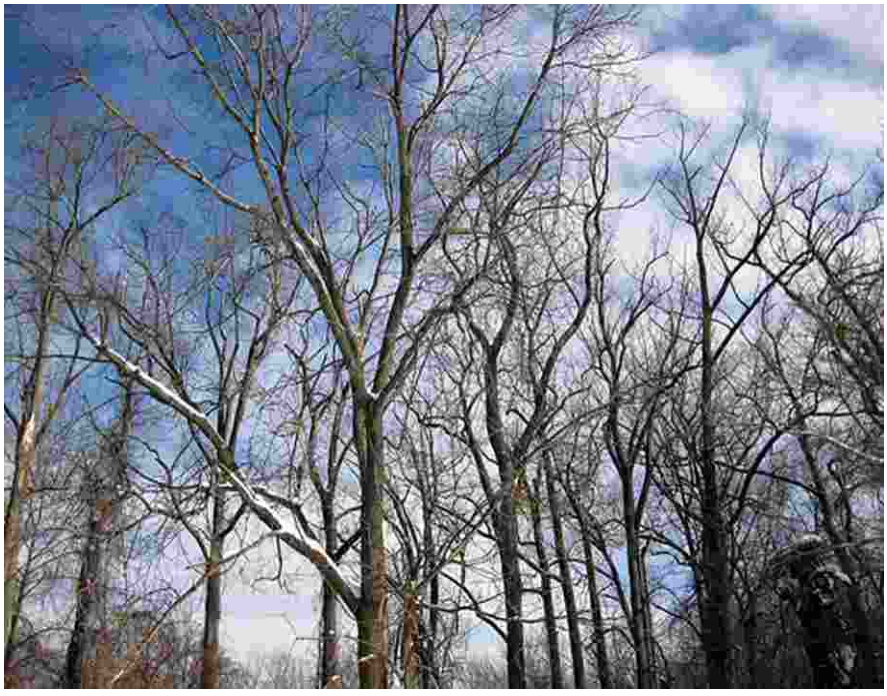

शैली और शिल्प का मिला-जुला सरलता से भरा विवरण कहीं-कहीं अमरेन्द्र जी की कल्पना को यथार्थ के दायरे में लाकर खड़ा करता है - एक चलचित्र की तरह उनकी कहानी 'चिड़िया' में। जिसमें एक मूक गुफ़्तार होती है उस बेज़ुबान चिड़िया और कहानी के मूल किरदार के बीच; जहां एक नया रिश्ता पनपता है। ऐसा महसूस होता है कि स्वयं को सबसे विकसित प्राणी मानने वाले मनुष्य को भी अपने परिवेश से और बहुत कुछ सीखना बाकी है।

अपना अतीत दोहराने पर मजबूर करती हैं। कहानी 'चूड़ीवाला' एक और ऐसी कहानी है जिसका मर्म दिल को छू लेता है। इसके वृतांत में 'सलीम चाचा' नामक चूड़ी बेचनेवाले किरदार का ता-उम्र का सफ़र और सरमाया है जो उन्होंने बख़ूबी निभाया है सामने आया है, जिसने बाल्यावस्था से वृद्धावस्था तक हर चौखट की शान को अपनी मान-मर्यादा समझा। एक मोड़ पर आकर उन्हें यह अहसास दिलाया जाता है कि 'घर की बहू बेटियाँ उनकी बेची चीज़ों की खरीदार हैं और वे फ़कत बेचनेवाले।' इन्सान के तेवर भी न जाने कब मौसम की तरह बदल जाते हैं! कभी एक ही चोट काफ़ी होती है बिखराव के लिये। ऐसा ही तूफ़ान उमड़ा सलीम चाचा के मन में और वही उन्हें ले डूबा। परस्पर इन्सानी रिश्तों का मूल्यांकन हुआ जिसमें एक अमानुषता का प्रहार मानवता पर भारी साबित हुआ।

शैली और शिल्प का मिला-जुला सरलता से भरा विवरण कहीं-कहीं अमरेन्द्र जी की कल्पना को यथार्थ के दायरे में लाकर खड़ा करता है - एक चलचित्र की तरह उनकी कहानी 'चिड़िया' में। जिसमें एक मूक गुफ़्तार होती है उस बेज़ुबान चिड़िया और कहानी के मूल किरदार के बीच; जहां

फोटो : उमेश ताम्बी, फिलाडेल्फिया

एक नया रिश्ता पनपता है। ऐसा महसूस होता है कि स्वयं को सबसे विकसित प्राणी मानने वाले मनुष्य को भी अपने परिवेश से और बहुत कुछ सीखना बाकी है। एक संबंध जो मानव मन को एक साथ कई अहसासात के साथ जोड़ देता है, उस पल के अर्थ में अमरेन्द्र जी की भाषा ज्ञानार्थ को ढूंढ रही है, अपनी-अपनी कथा कहते हुए। जो सीमाओं की सीढ़ियाँ पार करते हुए शब्दावली की अनेक धाराओं की तरह निरंतर कल-कल बह रहीं हैं, उस चिड़िया के आने और न आने के बीच की समय गति में मानवीय मन की उकीरता, उदासी, तड़प, छटपटाहट शायद कलम की सीमा से भले परे हो, पर मन की परिधि में निश्चित ही करीब रही है। कहना, सुनना और सुनाना शायद इसके आगे निरर्थक और निर्मूल हो जाते हैं। रिश्ते में एक अंतहीन व्यथा-कथा शब्दों से अभिव्यक्त होकर मन के एक कोने में अमिट छाप बन कर बस जाती है।

सशक्त भाषा, पुरसर शैली और किरदार की संवाद शक्ति, शब्दों की सरलता इन कहानियों को पठनीय बनाती है। शब्द शिल्प की नगीनेदारी उन्हें और भी जीवंत कर देती है। कहानियों के माध्यम से लेखक अपने ही मन की बंधी हुई गांठें और मानव-मन की परतों को भी उधेड़ रहे हैं। उदाहरण के लिए कहानी 'गवासी' ही लें। ज़मीन से जुड़ी यादें हरेक शख़्स की यादों के किसी हिस्से पर अधिकार रखती हैं और इंसान चाहकर भी ख़ुद को उन अधिकारों से वंचित नहीं रख पाता। ऐसी ही नींव पर ख़ड़ी है गवासी - एक इमारत जो स्मृतियों के रेगिस्तान में अब भी टहलती है, बीते हुए कल के 'आज' भी जिसके आँगन में पदचाप किये बिना चले जाते हैं- जैसे किसी बुज़ुर्ग के फैले हुए दामन में, जो अपने परिवार को बिखरने से बचाने के लिए अपने अंत को टाले हुए हैं।

इस शैली के प्रवाह पर सोच भी चौंक पड़ती है, ठिठक कर रुक जाती है। 'मृत्यु तो जैसे आ गयी, लेकिन जीवन ने जैसे आत्म-समर्पण करने से मना कर दिया हो... हाँ ऐसी ही है 'गवासी'। आश्चर्यचकित रूप में ख़ुद से जोड़ने वाली कहानी... कहानी कम, वृतांत ज़्यादा।

'एक पत्ता टूटा हुआ' काफ़ी हद तक मौसमों के बदलते तेवर दर्शाता हुआ वृतांत लगा, जो हवाओं के थपेड़ों के साथ जूझते हुए सोच की उड़ानों पर सवार होकर घर से दूर, मंजिल तक का सफ़र तय कर पाया है- *वो दर बदर, मकाँ बदर, मंजिल बदर हुआ / पत्ता गिरा जो शाख से जुड़ कर न जुड़ सका।*

कथा में हास्य-रस का स्वाद भी ख़ूब है। एक पत्ता अपने-अपने जीवन के हर पहलू का बयाँ कर रहा है, स्नेह के छुहाव का, प्यार की थपथपी का, औरों के पावों तले रौंदे जाने पर चरमराहट का, किताबों की कैद से रिहाई पाने के बाद ठण्ड के अहसास का, बड़ा ही सहज और रोचक प्रस्तुतीकरण है। लेखक की यह ख़ूबी, पाठक को अपने साथ बाँध रखने की, अपने आप में एक मुबारक अस्तित्वपूर्ण वजूद रखती है। जहाँ उम्र भर का अनुभव पल में सिमट रहा हो, वहीं पलों की गाथा ता-उम्र के सफ़र में भी संपूर्ण नहीं होती। रेखांकित की गई विषय-वस्तु सजीव, हास्य-रस में अलूदा एक पत्ते की आत्मा-कथा का चित्रण अति प्रभावशाली सिलसिले की तरह चलता रहा।

कहानी 'रेत का त्रिकोण' मानव-मन की दशा और दिशा दर्शाती है, बिछड़कर भी जुड़े रहने की संभावना की पेशकश है। कोई एक सूत्र है जो इंसान को इंसान से जोड़ता है, कोशिशें तो होंगी और होती रहेंगी, पर कब तक? क्या रेत के टीले पर बना भवन हवा के थपेड़ों से खुद को बचा पाया है? क्या रेत को मुट्ठी में कैद रख पाना संभव है? कई सवाल अब भी जवाब की तलाश में भटक रहे हैं, सर फोड़ रहे हैं। मानव-मन का प्रवाह अपनी गति से चल रहा है और भाषा का तरल प्रवाह पाठक के मन को मुक्ति नहीं दे रहा है।

'रेलचलित मानस' नामक कहानी अपने उन्वान का प्रतिबिम्ब है। दुनिया के प्लेटफ़ॉर्म पर खड़ी भीड़ का एक हिस्सा है मानव। सफ़र में इस छोर से उस छोर तक का अनुभव ही ज़िन्दगी को मान्यता प्रदान करती है, जो आज के माहौल की आपाधापी में गुज़र जाती है, रुकती नहीं। जो गुज़रती रहे गुज़रने के पहले वही तो ज़िन्दगी है!

अमरेन्द्रजी की कहानियाँ अपनी विषय-वस्तु, वर्णन-शैली के कारण रोचक और पाठनीय हैं। कभी कहानियाँ एक-दूसरे से जुड़ी हुई, ज़मीन से, ज़र से, मानवता से - जैसे जीवन की धार में अनुभव रूपी मोती पिरोये गए हैं। प्रकृति के हर एक मौसम का वर्णन प्रभावशाली बिम्ब बनकर सामने आता है। इन कहानियों की एक ख़ूबी यह भी है - वे जहाँ से शुरू होती हैं, वहीं समाप्त होकर और फिर वहीं से प्रारंभ होने का सामर्थ्य भी रखती हैं। ◆◆◆

कहानी संग्रह : चूड़ीवाला और अन्य कहानियाँ
लेखक : अमरेन्द्र कुमार
पन्ने : 174 कीमत : रु. 125
प्रकाशक : पेंगुइन बुक्स एंड यत्र बुक्स

Dr. Dilawri Wellnes & Rehabilitation Centre

Professional Consultation Services

வேலை இடத்தில் பாதிப்புக்குள்ளாகி விட்டீர்களா?
பொது இடங்களில் வழுக்கி விழுந்து விட்டீர்களா?
வாகன விபத்தின் தாக்கத்துக்குள்ளாகி விட்டீர்களா?
உடற்பயிற்சி மற்றும் விளையாடும்போது தீங்கு ஏற்பட்டுவிட்டதா?

Have You Suffered A Slip and Fall?
Are You Affected By A Sport Injury?
Did You Meet With An Automobile Accident?
Have You Been Affected By The Workplace?

क्या आप कभी फिसल कर गिर गये थे ?
क्या कभी आपको किसी खेल में चोट लगी थी?
क्या कभी आपको कार के एक्सीडेन्ट में चोट लगी थी ?
क्या आपको कभी अपने काम पर कोई चोट लगी थी ?

உங்களின் சேவைக்காக நாங்கள்

Dr. Nitin Dilawri, M.Sc., D.C., DAc

Chiropractor - Acupuncturist

1350 Ellesmere Road, Room No. 229

Bus: 416 645 3027

Fax: 416 422 6499

Direct: 647 438 6223

Text Message Only: 647 831 4357

E mail: info@accessconsultation.com

Locations: Greater Toronto Areas (G.T.A) I Durham I York I Peel

MEDICINE - MEDITATE - MIND

Personalized Investment Advice

For individual Investors

Member CIPF

Edward Jones®

Serving Individual Investors

Harvinder Anand
Investment Representative

- GICS
- Bonds
- Stocks
- Mutual Funds
- RRSPS RRIFS RESPS
- Life insurance
- Disability Insurance
- Critical Illness Insurance

INSURANCES AND ANNUITIES ARE OFFERED BY
EDWARD JONES INSURANCE AGENCY

Phone No: 905-472-8300 www. edwardjones.com

280 Elson St. Unit # 5, Markham, Ont. L3S 3L1

चित्रकाव्य-कार्यशाला

इस चित्र को देखकर आपके मन में जो भी भाव आये उन्हें अधिक से अधिक छः पंक्तियों में व्यक्त करके भेजें।

चक्की से दुनिया चले
यह है गुण की खान
चुस्त रखे कसरत शरीर
उत्तम दे आहार
पीसो गाओ, खाओ खूब
रोगों से हो कोसों दूर
राज महेश्वरी, कैनेडा

●

सखी चलो-चलो कुछ काम करें
गेहूं पीसें और कुछ धान दरें
जीवन की चक्की सदा चले
कुछ कर लें फिर विश्राम करें
ये चक्की बड़ी स्वास्थर्द्धक
आओ इसका गुण गान करें।
भगवतशरण श्रीवास्तव, कैनेडा

●

अबला जीवन सत्य तुम्हारी यही कहानी
चक्की पीसो, घर की सफाई, कुएं से भरना पानी
समय बदल गया हो, लेकिन
बदली नहीं तेरे भाग्य की कहानी।
डैनी कावला, कैनेडा

●

चक्की पीसती औरतें देख
माँ की याद आती है...
उसके हाथों से पिसे
आटे की बनी रोटियों
की याद आती है...
सुबह-सुबह चलती
माँ की चक्की और उस
आवाज़ की याद आती है...
डॉ. ओम ढींगरा, अमेरिका

●

चक्की चलती देखकर, कबीरा दिया था रोय
घर की चक्की चले तो तन मन हर्षित होय
सुखी रहो अन्नपूर्णा, रखो सबका ध्यान
सास-बहू मिल काम करें, बढ़े मान-सम्मान.
उषा देव, अमेरिका

पुस्तकें मिलीं

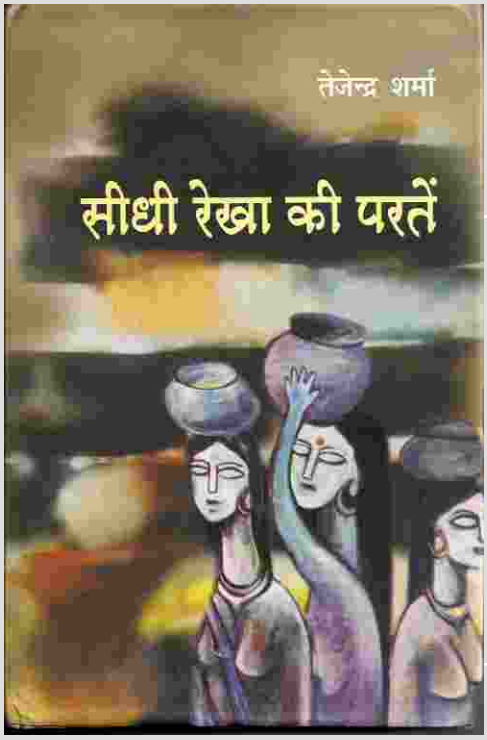

सीधी रेखा की परतें
सम्पूर्ण कहानियाँ भाग - एक
(1980-1999)
तेजेन्द्र शर्मा
वाणी प्रकाशन
वाणी प्रकाशन, 4695,
21-ए, दरियागंज, नयी दिल्ली-110002

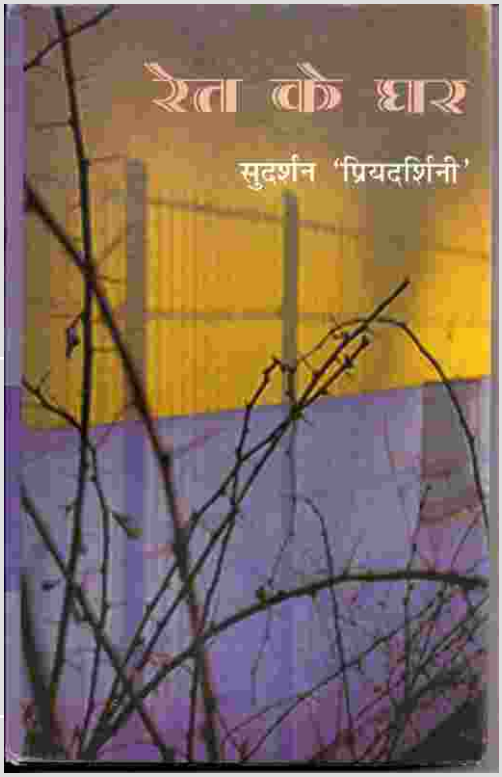

रेत के घर (उपन्यास)
सुदर्शन 'प्रियदर्शिनी'
भावना प्रकाशन
80, विजय ब्लॉक,
लक्ष्मी नगर, दिल्ली-110092

Dr. Varsha Vyas B.D.S, D.M.D.
Dental Surgeon

Prompt Emergency care
All Aspects of Dental Care
Teeth Whitening
Evening and Saturday appointments
Hindi, Punjabi & Gujrati spoken

Please call for immediate appointment:

#6 ....55 Harvest Moon Drive, (Steeles & Birchmount)
Markham, Ont. L3R 4C3 Tel. No. : 905-947-0040

BMS graphics

Choose from a variety of
Birthday - Mundan - Janoi - Anniversary
Indian & western

Wedding Invitations
Choose your own language

शादी, मुंडन,सालगिरह, जनेऊ कोई भी हो शुभ संस्कार।
हर प्रकार के निमंत्रण के लिए हमारी सेवायें हैं सदा तैय्यार।।

21 Bradstone Square, Scarborough, (Toronto) Ontario M1B 1W1
Tel: 416.803.7949 416.292.7959 Fax: 416.292.7969
E-mail: bmsgraphics@rogers.com

सोलहवां कथा यू.के. सम्मान हाउस ऑफ़ कॉमन्स में

प्रस्तुति : सूरज प्रकाश, भारत

कथा (यूके) के महासचिव एवं प्रतिष्ठित कथाकार श्री तेजेन्द्र शर्मा ने लंदन से सूचित किया है कि वर्ष 2010 के लिए **अंतर्राष्ट्रीय इंदु शर्मा कथा सम्मान** कहानीकार और रंगकर्मी हृषीकेश सुलभ को राजकमल प्रकाशन से 2009 में प्रकाशित उनके कहानी 'संग्रह वसंत' के हत्यारे पर देने का निर्णय लिया गया है। इस सम्मान के अन्तर्गत दिल्ली-लंदन-दिल्ली का आने-जाने का हवाई यात्रा का टिकट (एअर इंडिया द्वारा प्रायोजित) एअरपोर्ट टैक्स, इंगलैंड के लिए वीसा शुल्क, एक शील्ड, शॉल, लंदन में एक सप्ताह तक रहने की सुविधा तथा लंदन के खास-खास दर्शनीय स्थलों का भ्रमण आदि शामिल होंगे। यह सम्मान श्री हृषीकेश सुलभ को लंदन के हाउस ऑफ कॉमन्स में 08 जुलाई 2010 की शाम को एक भव्य आयोजन में प्रदान किया जायेगा। सम्मान समारोह में भारत और विदेशों में रचे जा रहे साहित्य पर गंभीर चिंतन भी किया जायेगा।

इंदु शर्मा मेमोरियल ट्रस्ट की स्थापना संभावनाशील कथा लेखिका एवं कवयित्री इंदु शर्मा की स्मृति में की गयी थी। इंदु शर्मा का कैंसर से लड़ते हुए अल्प आयु में ही निधन हो गया था।

इंदु शर्मा मेमोरियल ट्रस्ट की स्थापना संभावनाशील कथा लेखिका एवं कवयित्री इंदु शर्मा की स्मृति में की गयी थी। इंदु शर्मा का कैंसर से लड़ते हुए अल्प आयु में ही निधन हो गया था। अब तक यह प्रतिष्ठित सम्मान चित्रा मुद्गल, संजीव, ज्ञान चतुर्वेदी, एस.आर. हरनोट, विभूति नारायण राय, प्रमोद कुमार तिवारी, असग़र वजाहत, महुआ माजी, नासिरा शर्मा और भगवान दास मोरवाल को प्रदान किया जा चुका है।

15 फ़रवरी 1955 को बिहार के छपरा में जन्मे कथाकार, नाटककार, रंग-समीक्षक हृषीकेश सुलभ की विगत तीन दशकों से कथा-लेखन, नाट्य-लेखन, रंगकर्म के साथ-साथ

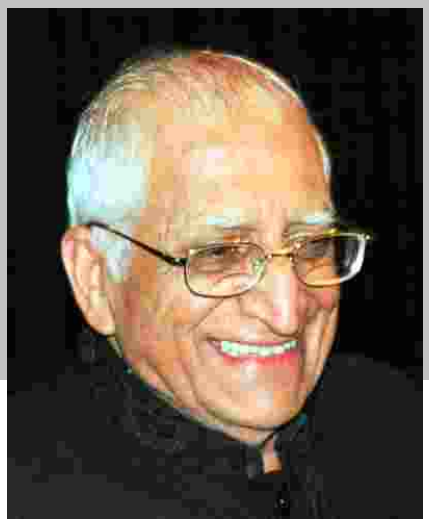

सांस्कृतिक आन्दोलनों में सक्रिय भागीदारी रही है। आपके तीन कहानी संग्रह 'बँधा है काल', 'वधस्थल से छलाँग' और 'पत्थरकट - एक जिल्द में तूती की आवाज़' के नाम से प्रकाशित हैं।

आपको अब तक कथा लेखन के लिए बनारसी प्रसाद भोजपुरी सम्मान, नाट्यलेखन और नाट्यालोचना के लिए डॉ. सिद्धनाथ कुमार स्मृति सम्मान और रामवृक्ष बेनीपुरी सम्मान मिल चुके हैं।

इस कार्यक्रम के दौरान भारत एवं विदेशों में रचे जा रहे हिन्दी साहित्य के बीच के रिश्तों पर गंभीर चर्चा होगी।

वर्ष 2010 के लिए **पद्मानन्द साहित्य सम्मान** इस बार संयुक्त रूप से श्री महेन्द्र दवेसर दीपक को मेधा बुक्स, दिल्ली से 2009 में प्रकाशित उनके कहानी संग्रह 'अपनी अपनी आग' के लिए और श्रीमती कादम्बरी मेहरा को सामयिक प्रकाशन से प्रकाशित उनके कहानी संग्रह 'पथ के फूल' के लिए दिया जा रहा है। दिल्ली में 1929 में जन्मे श्री महेन्द्र दवेसर 'दीपक' के इससे पहले दो कहानी संग्रह 'पहले कहा होता' और 'बुझे दीये की आरती' प्रकाशित हो चुके हैं। दिल्ली में ही जन्मी श्रीमती कादम्बरी मेहरा अंग्रेज़ी में एम.ए. हैं और उन्हें वेबज़ीन एक्सेलनेट द्वारा साहित्य सम्मान मिल चुका है। इससे पहले उनका एक कहानी संग्रह 'कुछ जग की' प्रकाशित हो चुका है।

इससे पूर्व इंगलैण्ड के प्रतिष्ठित हिन्दी लेखकों क्रमशः डॉ सत्येन्द श्रीवास्तव, सुश्री दिव्या माथुर, श्री नरेश भारतीय, भारतेन्दु विमल, डॉ. अचला शर्मा, उषा राजे सक्सेना, गोविंद शर्मा, डॉ. गौतम सचदेव, उषा वर्मा और मोहन राणा को पद्मानन्द साहित्य सम्मान से सम्मानित किया जा चुका है।

कथा यू.के. परिवार उन सभी लेखकों, पत्रकारों, संपादकों मित्रों और शुभचिंतकों का हार्दिक आभार मानते हुए उनके प्रति धन्यवाद ज्ञापित करता है जिन्होंने इस वर्ष के पुरस्कार चयन के लिए लेखकों के नाम सुझा कर हमारा मार्गदर्शन किया और हमें अपनी बहुमूल्य संस्तुतियां भेजीं। ◆◆◆

आपको अब तक कथा लेखन के लिए बनारसी प्रसाद भोजपुरी सम्मान, नाट्यलेखन और नाट्यालोचना के लिए डॉ. सिद्धनाथ कुमार स्मृति सम्मान और रामवृक्ष बेनीपुरी सम्मान मिल चुके हैं।

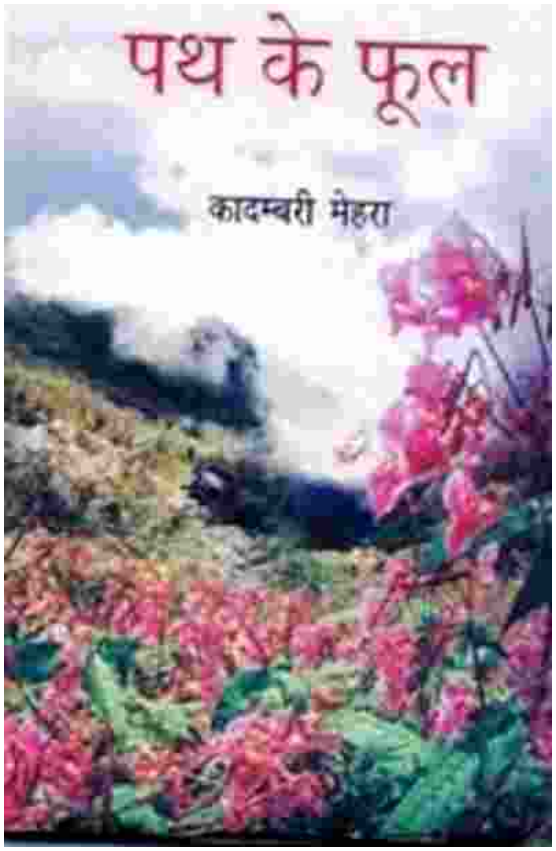

Hindi Pracharni Sabha

(Non-Profit Chatitable Organization)

Membership Form

For Donations and Life Membership we will provide a Tax Receipt

Annual Subscription: **$25.00 Canada and U.S.A.**

Life Membership: **$200.00**

Donation: $ _____

Method of Payment: **cheque, payable to " Hindi Prachani Sabha"**

Name:_____

Address: _____

_____

Telephone: Home: _____Business_____

e-mail:_____

****

Contact in Canada:

Hindi Pracharni Sabha
6 Larksmere Court
Markham, Ontario L3R 3R1
Canada
(905)-475-7165
e-mail: hindichetna@yahoo.ca

Contact in USA:

Dr. Sudha Om Dingra
101 Guymon Court
Morrisville, North Carolina
NC27560, USA
(919)-678-9056
e-mail: ceddlt@yahoo.com

ग़ज़ल

■ चाँद शुक्ला 'हदियाबादी', डेनमार्क

हम उन्हें फिर गले लगाए क्यों
आज़माए को आज़माए क्यों

जब यह मालूम है के डस लेगा
साँप को दूध फिर पिलाएँ क्यों

जब कोई राबता नहीं रखना
फिर उनके आस पास जाएँ क्यों

हो गया था मुगालता एक रोज़
बार बार अब फरेब खाएँ क्यों

जब के उनसे दुआ सलाम नहीं
मेरी ग़ज़लें वोह गुनगुनाएँ क्यों

'चाँद' तारों से वास्ता है जब
हम अंधेरों से मुँह लगाएँ क्यों

साहित्यिक समाचार

कनाडियन फेडरेशन ने आयोजित की 'कवि गोष्ठी'

'कनाडियन फेडरेशन ऑफ़ पोइटस' के 'हिंदी रायटर्स फेडरेशन' प्रभाग द्वारा 28 मार्च, 2010 को लक्ष्मी मंदिर, मिस्सिसौगा में एक कवि गोष्ठी आयोजित की गयी. कनाडियन फेडरेशन की कनाडियन कोर्डिनेटर श्रीमती शेरिल जेविअर, हिंदी फेडरेशन की चेअर श्रीमती प्रीति धमाने व को-चेअर श्री गोपाल बघेल 'मधु' ने आगंतुकों का स्वागत किया एवं संस्था का परिचय दिया एवं सभी उपस्थित कवि व श्रोताओं का परिचय कराया.

कवि गोष्ठी का प्रारंभ पं. सत्यानन्द सुकुल ने महान कवि तुलसीदास जी के राम चरित मानस के सस्वर संगीत के पाठ से किया. प्रमुख उपस्थित कविगण जिन्होंने कविता पाठ किया वे थे सर्वश्री भगवत शरण श्रीवास्तव, राकेश तिवारी, पाराशर गौड़, हरजिंदर भसीन, मोहम्मद अली भाई, रत्नाकर नराले, चन्द्र हास जोगी, गोपाल बघेल मधु, इत्यादि एवं श्रीमती शेरिल जेविअर, प्रीति धमाने, राजवीर शर्मा भारती, यस्मीन फिरदौस, श्यामा सिंह, प्रमिला भार्गव इत्यादि. उपस्थित श्रोताओं में थे सर्वश्री देवाशीष सागर (हिंदी टॉइम्स व अपना रेडियो), हिंदी महासभा के कोषाध्यक्ष, चन्द्रा सिंह व उनके सुपत्र, मोहम्मद अली भाई के तीन सहयोगी व मित्र, मास्टर जेविअर, सुश्री श्वेता बघेल, सुश्री नफीज़ा, पं. सुकुल के तबला व हर्मोनियम वादक सहायक एवं अन्य अनेक भद्रजन.

श्रीमती शेरिल जेविअर व यस्मीन फिरदौस जी (I look at face in mirror) ने अंग्रेजी कविताओं का पाठ किया. मोहम्मद अली भाई, हरजिंदर भसीन जी व यस्मीन फिरदौस जी ने उर्दू/हिंदी में अपनी कवितायें पढ़ीं. प्रीति धमाने जी ने 'गणित' की कवितायें पढ़ी व एक मराठी कविता भी पढ़ी. रत्नाकर नराले जी ने 'गोवर्धन उठायें हरी' पढ़ी. चन्द्र हास जोगी जी ने 'ब्रिज' की गुजराती कविता पढ़ी. श्यामा सिंह जी ने 'कहती है नयी पीढ़ी' व मार्मिक 'दोहे' पढ़ कर मन मोह लिया. भगवत शरण जी की आध्यात्मिक कवितायें 'वियोग से योग', 'स्वप्न सभी टूट गए', 'दीदार' ने आनन्द भर दिया. राजवीर जी की 'नन्हे से पखेरुआ - जिंदगी हसीं लम्हां' ने सबको रससिक्त कर दिया. राकेश तिवारी जी की रचनाओं 'हमने उसको समझा बहुत भोली', 'मेरे आने की आहट से', 'यह दुनियां' ने हास्य रस बिखेरा. अंत में गोपाल बघेल 'मधु' जी की कवितायें 'कितने हृदय मेरे हृद गुनगुनाये', 'उर में बहारें हैं, सुर में फुहारें हैं' उपस्थित कवि व श्रोताजनों को आध्यात्मिक तरंग में सराबोर कर गयीं. बल्गारिया की देवं प्रतिष्ठान की श्रीमती मौन कौशिक की कविता 'गंगा' का भी पाठ श्री गोपाल बघेल मधु ने किया.

कविता पाठ आध्यात्मिक, भक्ति, हास्य, करुणा आदि रस की कविताओं से ओतप्रोत था. कविताओं के चलचित्र (विडियो) आप www.YouTube.com/user/GopalBaghel अथवा www.GopalBaghel Madhu.com पर विविध लिंकों पर जाकर देख सकते हैं एवं कवि गोष्ठी का भरपूर आनंद ले सकते हैं. आगे होने वाली कवि गोष्ठिओं की जानकारी आप श्री गोपाल बघेल मधु से www.GopalBaghelMadhu.com अथवा www.FederationOfPoets.com के Hindi Federation से ले सकते हैं. ◆◆◆

प्रस्तुति : गोपाल बघेल 'मधु',
को-चेअर, हिंदी रायटर्स फेडरेशन, प्रभाग,
कनाडियन फेडरेशन ऑफ़ पोइटस

'शाश्वती' ने किया

अज्ञेय स्मारक व्याख्यान

का आयोजन

प्रस्तुति: बृजमोहिनी, जम्मू

जम्मू के अज्ञेय प्रेमी हिन्दी साहित्यकारों की संस्था 'शाश्वती' ने पहला अज्ञेय स्मारक व्याख्यान 7 मार्च 1998 को आयोजित किया था। उसी सिलसिले को आगे बढ़ाते हुए शाश्वती ने 7 मार्च 2010 को के.एल. सहगल हॉल जम्मू में अज्ञेय स्मारक व्याख्यान 2010 का आयोजन किया जिसमें हिन्दी के प्रतिष्ठित व्यंग्यकार और व्यंग्य-यात्रा के सम्पादक प्रेम जन्मेजय ने 'बदलते सामाजिक परिवेश में व्यंग्य की भूमिका' विषय पर अपना व्याख्यान दिया।

व्यंग्य समाज की बुराइयों पर चोट करता है। साहित्यकार विद्रूपताओं और विसंगतियों से समाज को मुक्ति दिलाने के लिए उसका इस्तेमाल ठीक वैसे ही करता है, जैसे डॉक्टर नश्तर लगा कर फोड़े के मवाद की सफाई करता है। बदलते सामाजिक मूल्यों की पड़ताल करते हुए प्रेम जन्मेजय ने कहा कि मैं उस पीढ़ी का हूं जिसने स्वतंत्रता शिशु की गोद में अपनी आंखें खोली हैं और जिसने लालटेन से कंप्यूटर तक की यात्रा की है। मेरी पीढ़ी ने युद्ध और शांति के अध्याय पढ़े हैं, राशन की पंक्तियों में डालडा पीढ़ी को देखा है तो चमचमाते मॉल में विदशी ब्रांड के मोहपाश में फंसी पागल नौजवान भीड़ को भी देख रहा हूं। मैंने विश्व में छायी मंदी के बावजूद अपनी अर्थव्यवस्था की मजबूती देखी है, पर साथ ही ईमानदारी, नैतिकता, करुणा आदि जीवन मूल्यों की मंदी के कारण गरीब की जी.डी.पी. को निरंतर गिरते देखा है। हमारा आज बहुत ही भयावह है। हमारे शहरों का ही नहीं आदमी के अंदर का चेहरा भी बदल रहा है। पूंजीवाद हमारा मसीहा बन गया है। उसने हमारा मोहल्ला, हमारा परिवार सब कुछ जैसे हमसे छीनकर हमें संवादहीनता की स्थिति में ला दिया है। एक अवसाद हमें चारों ओर से घेर रहा है। हमारी अस्मिता, संस्कृति और भाषा पर निरंतर अप्रत्यक्ष आक्रमण हो रहे हैं। हर वस्तु एक उत्पाद बनकर रह गई है। सामयिक परिवेश विसंगतिपूर्ण है तथा विसंगतियों के विरुद्ध लड़ने का एक मात्र हथियार व्यंग्य है। सार्थक व्यंग्य ही सत्य की पहचान करा सकता है, असत्य पर प्रहार कर सकता है और उपजे अवसाद से हमें बाहर ला सकता है। व्यंग्य एक विवशताजन्य हथियार है। व्यंग्य का इतिहास बताता है कि विसंगतियों के विरुद्ध जब और विधाएं अशक्त हो जाती हैं तो कबीर, भारतेंदु, परसाई जैसे रचनाकार व्यंग्यकार की भूमिका निभाते हैं। निरंकुश व्यंग्य लेखन समाज के लिए खतरा होता है, अत: आवश्यक है कि दिशायुक्त सार्थक व्यंग्य का सृजन हो जो वंचितों को अपना लक्ष्य न बनाए। व्यंग्य के नाम पर जो हास्य का प्रदूषण फैलाया जा रहा है उससे बचा जाए और बेहतर मानव समाज के लिए व्यंग्य की रचनात्मक भूमिका उपस्थिति की जाए।

वरिष्ठ साहित्यकार डॉ. ओम प्रकाश गुप्त ने अपने अध्यक्षीय भाषण में हिन्दी साहित्य को अज्ञेय के अवदान पर चर्चा करते हुए उनको एक महान व्यंग्यकार बताया। डॉ. गुप्त ने प्रेम जन्मेजय को धन्यवाद दिया कि उन्होंने एक बहुत ही महत्वपूर्ण विषय को उठाकर आने वाले खतरों के प्रति सावधान किया है।

कार्यक्रम के आरम्भ में अज्ञेय की आवाज़ में उनकी दो कविताओं का पाठ भी सुनाया गया। कार्यक्रम का संचालन करते हुए रमेश मेहता ने कहा कि अज्ञेय के सौवें जन्म दिन को लेकर जम्मू में खासा उत्साह देखा जा रहा है और वर्ष 2011 में इस संदर्भ में बड़े पैमाने पर कार्यक्रमों का आयोजन किया जायेगा।

डॉ. चंचल डोगरा ने अज्ञेय का और डॉ. आदर्श ने प्रेम जन्मेजय का परिचय प्रस्तुत किया। धन्यवाद ज्ञापन डॉ. निर्मल विनोद ने किया। ♦♦♦

कते -- महेश नन्दा *शैदा*

१ दर्द में पल लगे बरस गुज़र रहा हो जैसे
मिले यूं अपना के लगे ग़ैर मिला हो जैसे
मिला ना उठ के कोई दिल से लगाने वाला
बे लिहाज़ी का ही इक दौर चला हो जैसे

२ शैख़ के दिल को टटोला तो यह महसूस हुआ
वो भी हामी-ये"1" मैखाना सनमखाना हो जैसे
फिर हम पै निगाहें क्यों हर ग़ैर की उटतीं
उस कूचे में जाना भी गुनाह होता हो जैसे

३ हम इस शशो-पंज में के बुलवाये गये हैं
सर पै कारे-नुमायां"2" इक उभर आया हो जैसे
दिल को तो मना लेंगे रहे दूर वहां से
पै कहे अक्ल यही इक मौका मिला हो जैसे

४ किस तरह संभालेंगे इस जोशे तमन्ना को
इज़हारे-तमन्ना का ख्याल उठ आया हो जैसे
तूफान-ो-तबाही का सामां भी दिखे है
दिल बीच भंवर के अब आन फंसा हो जैसे

५ मोल दिल का न कुछ उस से लगा हो जैसे
कुचल के पत्ते की तरह गुज़र गया हो जैसे
कुछ और नज़र करने को अब जान बची है
हक"3" प्यार का यूं ही अदा होना हो जैसे

६ ख्वाहिश उठती भी है तो दब जाती है
दामने-हसरत"4" ही मेरा चाक हूआ हो जैसे
अब सई"5" करना भी दुशवार लगे है *शैदा*
"हरना" "6" बा-इ-से"7" तंग हौसला हुआ हो जैसे

---

1. हिमायत करना 2. सामने वालाख़ास काम 3. फर्ज़
4. हसरतों भरा आंचल 5. दौड धूप करना
6. बाज़ी हारना 7. हौसला कम होने का कारन

قطعے

۱. درد میں پل لگے برس گزر رہا ہو جیسے
ملے یوں اپنا کہ لگے غیر ملا ہو جیسے
نہ ملا اُٹھ کے کوئی دل سے لگانے والا
بے لحاظی کا ہی اک دُور چلا ہو جیسے

۲. شیخ کے دل کو ٹٹولا تو یہ محسوس ہوا
وہ بھی حامیٔ میخانہ صنم خانہ ہو جیسے
پھر ہم پہ نگاہیں کیوں ہر غیر کی اُٹھتیں
اُس کوچے میں جانا گنہ ہوتا ہو جیسے

۳. ہیں شش و پنج میں کہ بلوائے گئے ہیں
سر پہ اک کار نمایاں اُبھر آیا ہو جیسے
دل کو منا لینگے، رہے دُور وہاں سے
پہ کہے عقل یہی اک موقع ملا ہو جیسے

۴. کس طرح سنبھالینگے اس جوشِ تمنّا کو
اظہارِ تمنّا کا خیال اُٹھ آیا ہو جیسے
طوفان و تباہی کا ساماں بھی دکھے ہے
دل بیچ بھنور کے یاں آن پھنسا ہو جیسے

۵. مول دل کا نہ کچھ اُس سے لگا ہو جیسے
کچل کے پتّے کی طرح گزر گیا ہو جیسے
کچھ اور نظر کرنے کو اب جان بچی ہے
حق پیار کا یوں ہی ادا ہونا ہو جیسے

۶. خواہش اُٹھتی بھی ہے تو دب جاتی ہے
دامنِ حسرت ہی میرا چاک ہوا ہو جیسے
اب سعی کرنا بھی دُشوار لگے ہے شیدا
"ہرنا" باعث تنگ حوصلہ ہوا ہو جیسے

مہیش نندہ شیدا

Mistaan Catering & Sweets Inc.

Specializing in Bengali Sweets We do catering for Weddings & Parties

मिष्ठान की मिठाइयाँ

मिष्ठान की मिठाइयाँ
खाओ रसगुल्ले और रस मलाइयाँ

Our Daily Take-out Foods include:

Channa Bhatura	Aloo Ghobi
Malai Kofta	Matter Paneer
Channa Masala	Chicken Masala
Chicken Tikka	Tandoori Chicken
Butter Chicken	Goat Curry

& many more delicious items

अब आप बैठ कर खाने-पीने का आनन्द ले सकते हैं

460 McNicoll Avenue, North York, Ontario M2H 2E1

Visit Our Website: www.mistaan.com

Telephone: (416) 502-2737 Fax: (416) 502-0044

RAMA BAHRI

416-565-2596

Win a BMW car

When you buy or sell through me you have a chance to win a new BMW

HomeLife GTA

GTA Realty Inc., Brokerage
Bus: 416.321.6969
Fax: 416.321.6963
206 - 1711 McCowan Rd., Scarborough, ON. M1S 3Y3

विलोम चित्र काव्य शाला

क्रमांक ६

• चित्रकार: अरविन्द नारले • कवि: सुरेन्द्र पाठक

यह संसार बना है, जब से जन्मा है इन्सान
नये बनाये उसने, मनोरंजन के सब सामान
न में सुख-दुख आये, क्या गरीब और क्या अमीर
किसी को क्या मिलता है, यह तो अपनी अपनी तकदीर

में ज़रा देखिये, एक राजा की ऊंची शान
लाने चला नृत्य-घर, हाथ में फूल और मूँह में पान
कलगी वाली पगड़ी, गले लिपटा है रुमाल रेशमी
लंबी पहने हुये है, सफेद पोशाख बड़ी कीमती

●

चित्र उलटा कर के देखो, तो होगा तुम्हे यह
उसके मनोरंजन का साधन, उसके रुतबे के ह

नृत्य करती हुई अब देखो, तीन सुंदर जवां
पेट की खातिर या मजबूरी से, नाच रही है
बहुत बड़ी नृत्यशाला है, अर्धगोल है जिसकी
साज सज्जासे सजी हुई, जल रही शमांयें यह

तात्पर्य
युग युग से दुनिया ना बदली, और ना बदला यह
पर समय समय पर रहा बदलता, इसके मनोरंजन
हर समय इन्सान का दिल, कोई भी मनोरंजन ना
पल दो पल तो लगे वो अच्छा, फिर दिल उससे भ
अपने मन को बहलाने को, सौ यतन करे इन्सान
कस्तूरी का मृग यूं ढूंढे खुशबू, घूमे जंगल म

अधेड़ उम्र में थामी कलम

(कभी-कभी कुछ लिखने को मन करता है, पर बहुत-सी बाधाएँ महसूस होती हैं, बढ़ती उम्र उस उमंग को रोक लेती है... रुकिए मत... उठाइए कलम और लिख डालिए अपने भाव... इस स्तम्भ के अंतर्गत इस बार हम उषा देव का संस्मरण दे रहे हैं, अगले अंक में कृपाल कौर और मालती सत्संगी की रचनाएँ आप पढ़ेंगे।)
- संपादक

विधि की विडंबना : एक यात्रा संस्मरण

उषा देव, अमेरिका

अभी हाल ही में मैं भारत दर्शन के लिए गई, परिवार और पुराने मित्रों से मिलने, अपने सुख दु:ख सुनाने और उनके सुनने. मेरे पास पाँच सप्ताह का समय था जो इस उद्देश्य के लिए काफी था.

दिल्ली के इंदिरा गाँधी अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे पर उतरते ही मन प्रसन्न हुआ. हर प्रकार से अच्छा परिवर्तन देखा. खुला स्थान, सामान आने में शीघ्रता, विनम्रता से बोलते हुए कर्मचारी और हर प्रकार से यात्रियों की सहायता करने को तत्पर. खैर, आधी रात का समय था. आराम से टैक्सी में बैठे और घर पहुँचे. थके होने के कारण शीघ्र ही निद्रा देवी ने आ घेरा और मैं सपनों के संसार में पहुँच गई.

दिल्ली में मुझे कुछ काम थे, सो अगले दिन मैं मेरे पति, मेरी छोटी बहन और उसके पति उनकी नई गाड़ी में सवार होकर निकल पड़े. दिल्ली में इतनी अधिक गतिविधियां चल रही थी कि विश्वास करना कठिन हो रहा था कि यह वही दिल्ली है जो हमने तीन साल पहले देखी थी. चारों ओर नई-नई कई मंजिलों के अपार्टमेन्ट बिल्डिंगें, बड़े-बड़े माल, फ्लाई ओवर, मेट्रो तथा करोड़ों रुपयों से बन रहे महलनुमा मकान. लग रहा था जैसे कोई छप्पर फट गया है और पैसा बेहिसाब नीचे गिर रहा है, जिसका जितना जी चाहे उठा ले. सगे-सम्बन्धियों में जिसके घर भी गए, सबके पास भिन्न-भिन्न प्रकार की गाड़ियां. एक नहीं दो-दो, यहाँ तक कि तीन-तीन भी. बच्चों के पास भिन्न-भिन्न प्रकार के बैटरी से चलने वाले खिलौने, लड़के-लड़कियों के पास मोबाइल, ब्लैकबेरीज़, आईपॉड, हर जाने-माने ब्रॉण्ड के कपड़े, जूते आदि सभी कुछ है और हो भी क्यों न, सब इतनी मेहनत जो करते हैं. सब अंग्रेजी माध्यम स्कूलों में पढ़ते हैं,

> ***'वाह रे विधि की विडम्बना!' प्रभु की क्या माया है? साधनों का कितना असमान्य वितरण है. जो इस 'उन्नति' में अपना अधिकतम योगदान दे रहे हैं, जो दिन-रात अपने खून पसीने से इस उन्नति को सींच रहे हैं, उनके पास न भरपेट खाना है और न तन पर पूरे कपड़े, न ही भविष्य में कोई सुधार की आशा. मुझे लगा मेरा देश कितना निर्धन है?***

जिनके दाखले के समय माता-पिता को दान के रूप में हजारों रुपये देने पड़ते हैं. घर में स्त्रियों की सुविधा के लिए सब छोटे-बड़े साधन उपलब्ध हैं. ऐसा लगा अमेरिका और भारत में क्या अंतर रह गया है? कुछ भी नहीं. 'अपने देश' पर गर्व हुआ की कितनी शीघ्रता से 'हमारा देश उन्नति के पथ पर भाग रहा है'.

मुझे भारत आए दो सप्ताह बीत चुके थे और इस उन्नति का मैं पूर्ण रूप से रसास्वादन कर रही थी. एक शाम मेरे पति बोले, 'चलो थोड़ा आसपास घूम आयें.' बातें करते-करते हम न जाने किस दिशा में निकल गए. सामने देखा, एक सुंदर माल दिखाई दिया जिसका निर्माण कार्य अभी चल रहा था. उससे कुछ दूरी पर ही एक फाइव स्टार होटल का निर्माण हो रहा था. दोनों इमारतें काफी प्रभावशाली थीं. उत्सुकतावश हम आगे बढ़े. पास ही उन मजदूरों की झुग्गियां थीं जो इन इमारतों के निर्माण में कार्यरत थे. शाम का समय था, कार्य बंद हो चुका था. मज़दूरों के बच्चे अधनंगे इधर-उधर भाग रहे थे. पास ही मलमूत्र मिला, गंदा बदबूदार पानी भर रहा था. चार-पाँच नाक बहाते बच्चे प्रकृति की मांग का उत्तर दे रहे थे, शायद जहाँ माँ खाना बना रही थी. उससे 5-7 गज दूर, कुछ मजदूर सारे दिन और न जाने कितने दिनों की थकावट से थककर जमीन पर बिछाए लेटे हुए थे. दाढ़ी बढ़ी हुई, शरीर इतने दुबले-पतले कि हड्डियां तक गिन लो, दांत आधे टूटे, मैले-कुचैले शरीर पर कपड़ों के नाम पर चीथड़े, आँखों में आशा की कोई किरण नहीं.

लगभग लाख पचास हज़ार मज़दूर राजस्थान, बिहार, उड़ीसा, पूर्वी उत्तरप्रदेश आदि से दिल्ली में आकर आर्थिक गुलामी के वातावरण में दिन-रात काम कर रहे हैं. उनकी सुरक्षा का कोई उचित प्रबंध नहीं है. पचासों व्यक्ति असुरक्षित वातावरण में दुर्घटनाओं के शिकार हो चुके हैं. यदि ठेकेदार की दया से काम मिल जाये तो स्त्रियाँ पुरुषों के बराबर काम करती हैं, परन्तु उनको वेतन अभी भी पुरुषों के बराबर नहीं मिलता. उनके बच्चों की शिक्षा का कोई प्रबंध नहीं. यहाँ तक कि उनके लिए पीने के पानी की भी सुविधा नहीं है. नाम के लिए लोकसभा में स्त्रियों को पुरुषों से समानता मिलने के कई बिल पास हो चुके हैं, परन्तु स्थिति जहाँ थी वहीं है.

मैंने सोचा, 'वाह रे विधि की विडम्बना!' प्रभु की क्या माया है? साधनों का कितना असमान्य वितरण है. जो इस 'उन्नति' में अपना अधिकतम योगदान दे रहे हैं, जो दिन-रात अपने खून पसीने से इस उन्नति को सींच रहे हैं, उनके पास न भरपेट खाना है और न तन पर पूरे कपड़े, न ही भविष्य में कोई सुधार की आशा. मुझे लगा मेरा देश कितना निर्धन है? अभी कितना करना बाकी है? यही अंतर है अमेरिका और भारत में. ◆◆◆

CARPET PLUS

SAVE UP TO 70%
LUXURIOUS CARPETS
ORIENTAL RUGS

Commercial &
Residential
Installations

F ***•Installation***
R ***•Underpad***
E ***•Delivery***
E ***•Shop at Home***

Tel: (416) 661 4444
Tel: (416) 663-2222
Fax: (905) 264-0212

Vinyl Tiles

Broadloom

180 Winges Rd. Unit 17-19
Woodbridge,
Ontario L4L 6C6

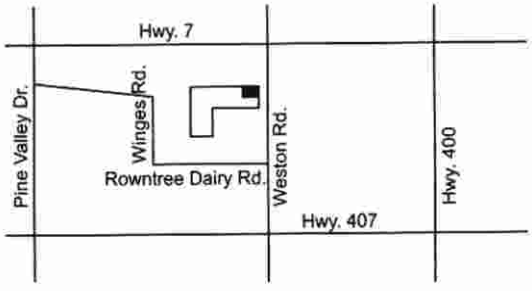

Finest Source of :

International Flag Pins

Campaign Buttons

Friendship Pins

Embroided Crests (Patches) of All Countries

International & Provincial Flags of all sizes, Souvenirs

Mini Banners & Keychains of all countries available

Custom work available for Pins, Buttons, Crests and Flags
At Factory Direct Prices Free Set up & Shipping

We carry more than 500 Titles each of Pins, Flags & Crests in stock

Pinsnflags.com Inc., 83 Queen Elizabeth Boulevard, Toronto, Ont., M8Z 1M5

Tel: 416-599-3524 Fax: 416-599-3525

Toll Free: 1-877-322-4771 E-Mail: veena@pinsnflags.com

www.pinsnflags.com

मेरे मित्रो! हिन्दी वोलो, अपने वच्चों को हिन्दी सिखाओ! अपनी भाषा और संस्कृति को वचाओ!1